भारत रत्न विजेता

भारत रत्न विजेता

[भारत-रत्न से अलंकृत महापुरुषों की जीवन झांकी]

कमल शुक्ल

जीवन ज्योति प्रकाशन
3014, चर्खेवालान, दिल्ली-110006

प्रथम संस्करण 1990

मूल्य 40 00 रुपये

प्रकाशक जीवन ज्योति प्रकाशन
3014, चर्खेवालान,
दिल्ली 110006

मुद्रक शांति मुद्रणालय
29/62, गली न० 11, विश्वासनगर, दिल्ली-32

BHARAT RATN VIJETA by Kamel Shukla Rs 40 00

अनुक्रम

राजाजी (राजगोपालाचार्य)

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य हमारे देश के सबसे पहले भारत रत्न विजेता हुए हैं। इन्हें यह सम्मान सन् 1954 ई० में दिया गया था।

इनकी मृत्यु 94 वर्ष की उम्र मे हुई। इन्हे भारत रत्न के अलकरण से अलकृत किया गया। यह एक नया पद था। जिसका श्रीगणेश इनसे ही हुआ।

ये देश के गौरव थे। प्रतिभा सम्पन्न एक उच्चकोटि के विद्वान थे। ये देशहित के लिए हमेशा कार्य करते रहे। इसीलिए इनको सच्चा देशभक्त कहा जायेगा।

ये भारत के स्वतन्त्रता सग्राम के अमर सेनानी थे। इन्होंने गोरी सरकार का खूब खुलकर विरोध किया इसके लिये प्रसिद्ध थे। इन्होंने सत्याग्रह किया। नमक बनाकर नमक कानून को भग किया। ये गिरफ्तार हुए और कई बार जेल गये।

ये एक कमठ और महान पुरुष थे। कठिन-से कठिन समस्या भी इनके सामने आ जाती, तो तनिक भी नही घबराते। साहस से काम लेते और अकेले ही उस समस्या का समाधान करते।

राजाजी का जन्म सन् 1878 ई० मे हुआ था। यह महीना दिसम्बर का था और तारीख 8 थी। तब मद्रास प्रात को तमिलनाडु कहते थे।

मद्रास के सेलन जिले मे थोरापल्ली नाम का एक छोटा-सा गाव है। वही हमारे राजाजी ने जन्म लिया। ये वैष्णव परिवार के थे।

इनके पिता का नाम नल्लन जी था। वे ऊचे वैष्णव ब्राह्मण थे।

तब पूरे भारत मे तो अधिक नही, लेकिन दक्षिण भारत मे छुआछूत का बहुत अधिक बोलबाला था। सडक आदि की सफाई करने वाले लोग मेहतर थे। जिन्हे अब आजकल हरिजन कहा जाता है। यह सज्ञा उन्हे गाधी जी ने दी थी।

इन अछूतो के लिये यह आदेश था कि इनकी छाया भी ऊची जाति के लोगो पर नही पडनी चाहिए। इसीलिए सूरज निकलने से पहले ही पहले सडको की सफाई हो जाती। कोई भी अछूत दिखलाई नही पडता। ऐसे समय मे राजाजी ने ज म लिया था। वे बचपन से ही बहुत अधिक उदार स्वभाव के थे।

उनकी माता उन्हे धम की शिक्षा देती। वे बालक गोपाला-चाय को महाभारत की कहानिया सुनाती। गीता और रामायण की कहानिया कहती। बालक पर इसका प्रभाव पूरी तरह पडता और इनकी रुचि धार्मिक बन गई।

राजगोपालाचाय के पिता चक्रवर्ती नल्लन जी गाव मे नही रहते थे। परिवार गाव मे रहता था और वे सेलम नगर मे रहते थे। वहा अदालत मे वे मुन्सिफ थे।

नल्लन जी का न्याय प्रसिद्ध था। उनकी पूरी कचहरी मे तारीफ होती और यह कहा जाता कि वे एक दयालु पुरुष हैं।

राज गोपालाचाय को पढने के लिए गाव की पाठशाला मे बैठा दिया गया। जब उनकी आरम्भ की शिक्षा पूरी हो गई तो ऊची शिक्षा ग्रहण करने के लिए बगलौर भेजा गया।

वहा गोपालाचाय ने इण्टरमीडिएट कर लिया। फिर वे मद्रास चले आये और वहा के प्रेसीडेंसी कालेज मे दाखिला ले लिया। बी० ए० यही से पास किया और एल० एल० बी० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की।

राजाजी जब कानून पढ रहे थे। तो उनकी भेंट स्वामी विवेकानन्द से हुई। उनके प्रवचन उन्हे हमेशा याद रहें और जीवन-भर प्रेरणा देते रह।

राजाजी का जीवन बहुत ही साधारण ढग का था। वे धमपरायण व्यक्ति थे। कहने के लिए ब्राह्मण थे, लेकिन उनकी विचारधारा तनिक भी सकुचित नहीं थी। वे पाखण्ड को नही मानते थे, हमेशा उसकी निंदा करते।

उनकी दिनचर्या मे प्रात चार बजे से लेकर रात को दस बजे तक कोई भी ऐसा समय नहीं था जिसे अवकाश कहा जाता।

नित्य सूर्योदय से पहले उठना और दैनिक कार्यों से निवृत्त हो जाना। उसके बाद पूजा पाठ, मनन और अध्ययन। सादा भोजन, सादा लिबास, कोई शौक नही। उन्होने कभी सिगरेट नही पी। ऐसे ही कभो शराब को हाथ नही लगाया। वे मासाहारी नही थे, उन्हे शाकाहारी ही कहा जाता।

हा वे स्वाभिमानी थे, और यह स्वाभिमान उन्हें अपने पिता से विरासत के रूप मे मिला था।

राजाजी उच्चकोटि के लेखक थे। उन्होने महाभारत, गीता और रामायण का अनुवाद किया। यह अनुवाद उनका अपने ढग का निराला था। उन्होंने कई विषयो पर खूब लिखा है। उनकी लेखनीय स्वतन्त्र थी। वे लिखने मे तनिक भी सकोच नहीं करते। छोटी छोटी कहानियो को उन्होने बहुत बडी सख्या मे लिखा ह। उन्होने तमिल मे एक पुस्तक लिखी है। जिसका नाम चक्रवर्ती थिरुमगम है। साहित्य अकादमी ने इस पुस्तक पर पुरस्कार दिया और राजाजी को सम्मानित भी किया।

राजाजी एक कुशल सम्पादक भी थे। महात्मा गाधी एक समाचार-पत्र निकालते थे। उसका नाम यग इण्डिया था।

राजाजी ने कुछ दिन तक उसका भी सम्पादन किया।

उन्होने स्वराज्य नाम का एक अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र निकाला। उसका अपने अन्तिम समय तक सम्पादन करते रहे। इसी तरह डियर-रीडर पत्र भी उन्होने निकाला था।

राजाजी ने सेलम मे अपनी वकालत शुरू कर दी। थोडे ही समय मे उनका नाम हो गया और पैसा उनके पीछे पीछे घूमने लगा। उन्होने किसी भी पुराने वकील को अपना गुरु नही बनाया। यह सबको आश्चर्य था, लेकिन उनको सफलता मिली।

राजाजी सामाजिक कार्यों मे भी रुचि लेने लगे। उन्होने धर्म के पाखण्ड का खण्डन किया। इसका परिणाम यह हुआ कि पूरे का पूरा ब्राह्मण वर्ग उनके खिलाफ हो गया। मगर राजा जी ने इसकी तनिक भी चिन्ता नही की। वे अपने कार्य मे व्यस्त रहे।

समाजसेवी होने के कारण राजगोपालाचार्य सेलम नगर की नगरपालिका के अध्यक्ष चुने गये। अब उन्हें समाज सेवा का काम करने का मौका मिला। दो साल तक वे उस पद पर बने रहे और समाज का सुधार करते रहे। अछूतो को बहुत छूट मिल गई। उनका कायाकल्प हो गया और वे राजाजी की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

राजाजी सन् 1904 ई० मे कांग्रेस मे आये। वे कांग्रेस के सदस्य बन गये। फिर श्रीमती एनीबेसेंट होमरूल लीग मे भी कार्य करने लगे।

कुछ दिन बाद ही राजाजी मद्रास चले आये और हाई कोर्ट मे वकालत करने लगे। गाधीजी से उनकी मुलाकात सन् 1919 ई० मे हुई थी। उन्होने असहयोग आन्दोलन को समझा और गाधीजी का समर्थन किया।

तब रॉलेट एक्ट के खिलाफ आन्दोलन चल रहा था। राजा

जी की राय से उपवास और सत्याग्रह भी किये जाने लगे। इसी अवसर पर राजाजी पहली बार जेल गये।

इसके बाद राजाजी स्वन्तत्रता सग्राम मे कूद पड़े। उन्होने हरिजनो के उद्धार के लिए बहुत काम किये। नशाबन्दी के खिलाफ आवाज उठाई, गाधी आश्रम की स्थापना की और खादी का अभियान चलाया।

राजाजी ने दक्षिण भारत मे हिन्दी का प्रचार किया। उसकी नीव डाली। मद्रास के मुख्यमन्त्री होने पर उन्होने वहा हिन्दी को अनिवार्य कर दिया। लेकिन इन्हें विशेष सफलता नही मिली। आजादी मिलने के बाद सभी हिन्दी का विरोध करने लगे।

राजाजी भारत के सबसे पहले गवर्नर जनरल बनाये गये। जिसे वायसराय कहा जाता है। भूतपूर्व लार्ड माउटबेटन जो वायसराय थे, उन्होने राजाजी के लिए कहा कि राजाजी एक महान राजनीतिज्ञ है, वे भारत के वायसराय होने के लिए पूरी तरह योग्य है।

दो साल तक राजाजी गवनर जनरल रहे। फिर उन्होने अवकाश ले लिया। सात महीने तक वे विश्राम करते रहे। फिर प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू के विशेष आग्रह पर उन्हे केन्द्र के मत्री मण्डल मे आना पडा। सरदार वल्लभभाई पटेल की मृत्यु हो गई थी। नेहरू जी ने गृहमन्त्री का पद राजाजी को सौप दिया।

सन् 1950 ई॰ मे राजाजी गृहमत्री बने थे। उसके एक साल बाद ही उन्हाने त्याग पत्र दे दिया। वे खरे स्वभाव के थे। इसीलिए कुछ लोगों से मतभेद हो गया और उन्होंने पद का त्याग कर दिया।

सन् 1952 ई॰ मे आम चुनाव हुआ। यह स्वतन्त्र भारत

का पहला चुनाव था। तब बगाल की काग्रेस बहुत कमज़ोर हो गई थी। नेहरू जी के कहने पर राजाजी ने बगाल की काग्रेस का उद्धार किया। लेकिन यहा भी अधिक दिन नही रहे। दो साल बाद ही अलग हो गये और स्वतन्त्र देश की सेवा करने लगे। वे वतमान सरकार से पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं थे। इसीलिए अलग अपनी एक पार्टी बनायी। उसका नाम स्वतन्त्र पार्टी रखा।

जब 1967 ई० का चुनाव हुआ। तो राजाजी की स्वतन्त्र पार्टी ने भी चुनाव लडा। उसे किसी हद तक सफलता भी मिली और राजा जी को सतोष हो गया।

राजाजी 94 साल के हो गये थे, लेकिन वे पूरी तरह स्वस्थ थे। उनकी दिनचर्या ऐसी थी कि उनका प्रत्येक काम समय पर और नियमित रूप से होता।

राजाजी ब्राह्मण होने के नाते अपने धम-कम को कभी नही भूलते। वे कहते कि आदेश गीता का है, यहा योगीराज श्री कृष्ण जी ने जन्म लिया था। यह धरती रामायण की है। यहा मर्यादा पुरुषोतम राम हुए थे। यह महाभारत भूमि है। पूरे ससार मे अर्जुन का गाण्डीव धनुष प्रसिद्ध था।

राजाजी सच्चे देशभक्त थे। उनसे देश का दु ख देखा नही जाता था। उदार इतने अधिक थे कि वहुत जल्दी मोम की तरह पिघल जाते।

कहा जाता है कि सीधे आदमी को जब गुस्सा आ जाता है, तो वह बेकाबू हो जाता है। ठीक यही परिस्थिति राजाजी के साथ भी थी। वे स्वाभिमानी थे और अपने स्वाभिमान की हत्या कभी नही होने देते। उन्हें क्रोध आने का मूल कारण यही होता।

सन् 1762 ई० मे 25 दिसम्बर के दिन राजाजी इस ससार से विदा हो गये। वे अपनी याद छोड गये हैं। उनके चरित्र, उनके

व्यक्तित्व, उनके कार्यों और उनके साहित्य से आज का ससार ही नहीं, बल्कि आने वाला युग भी लाभ उठायेगा। प्रेरणा लेगा और उनके चरण चिह्नो पर चलेगा।

राजाजी मृत्यु को प्राप्त होकर भी अमर हैं। वे मा वसुधरा के अमर पुत्र थे। स्वतन्त्रता सग्राम के सेनानी थे और एक महान पुरुष थे।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन

राधाकृष्णन का जन्म मद्रास से लगभग 60 किलोमीटर दूर एक छोटे से गाव मे हुआ था। इस गाव का नाम तिरुत्तणी है। तब महीना सितम्बर का था और सन 1888 था। ये साधारण परिवार मे पैदा हुए थे। ये अपने गाव तिरुत्तणी मे पढे। उसके बाद तिरुपति गये। ये पाठशालायें ईसाई मिशनरियो की थी। लेकिन राधाकृष्णन हिन्दू धर्म का विशेष ध्यान रखते। वे धर्म को कभी नही भूलते।

गाव की शिक्षा पूरी करके राधाकृष्णन मद्रास आ गये। यहा वे मन लगाकर पढने लगे। दर्शनशास्त्र मे उनकी बहुत गहरी रुचि थी, जिसे फिलासिफी कहते हैं।

अभी राधाकृष्णन 21 साल के ही थे कि मद्रास के प्रेसीडेन्सी कालेज मे अध्यापक नियुक्त हो गये। वे दर्शन विभाग मे ऊचे पद थे। इसके बाद जब तक वे भारत के उपराष्ट्रपति नही बन गये। तब तक लगातार पढाते ही रहे। अध्यापन उनका काम क्षेत्र बन गया था और वे इसमे पूर्णतया सन्तुष्ट थे।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने हमेशा दर्शनशास्त्र ही पढाया। वे हिन्दू धर्म भी पढाते थे। हमारे देश भारतवर्ष मे स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद शिक्षक दिवस मनाया जाता है या अध्यापक दिन 5 सितम्बर का होता है। यह इसलिए मनाया जाता है क्योकि इसी दिन डा० राधाकृष्णन का जन्म हुआ था।

तीस साल की आयु मे राधाकृष्णन को मैसूर विश्वविद्यालय

मे बुला लिया गया। वहा वे दर्शन के प्रोफेसर बना दिये गये और रुचि के साथ पढाने लगे।

इसी समय राधाकृष्णन ने अग्रेजी मे एक पुस्तक लिखी। जिसका नाम द रेन आफ रिलीजन इन काण्टेम्पोरेरी फिलासफी है। इसका अर्थ यह है कि समकालीन दर्शन साहित्य मे धर्म का अधिकार।

यह किताब पूरे ससार मे चर्चा का विषय बनी। भारत मे ही नहीं विदेशो मे भी राधाकृष्णन को सम्मान मिला। वे चर्चा का विषय बन गये और उनके लिए कहा जाने लगा कि वे दर्शन-शास्त्र के पण्डित हैं।

राधाकृष्णन प्रोफेसर थे। वे लेखक थे। उनके लेख ससार की सभी पत्रिकाओ मे छपते। ये प्रतिष्ठित पत्रिकाए और समाचार-पत्र थे। इनसे राधाकृष्णन को बहुत अधिक सम्मान मिला और वे उच्चकोटि के लेखक कहे जाने लगे।

इसी समय इग्लैण्ड के बादशाह जार्ज पचम भारत आये थे। तब कलकत्ता विश्वविद्यालय ने उनके नाम पर एक नयी पीठिता बनायी। यह दशन साहित्य के लिए बनायी गयी थी। मैसूर से राधाकृष्णन को कलकत्ता बुला लिया गया था। वे इस पीठिता मे आ गए और दर्शनशास्त्र पढाने लगे।

राधाकृष्णन के लेख ससार की सभी पत्रिकाओ मे छप रहे थे। उनका सभी जगह नाम था। वे ख्याति के ऊचे शिखर पर पहुच गये। अब वे अपना व्यारयान देने के लिए भी विदेशो मे आमन्त्रित किए जाने लग।

सबसे पहले इग्लैण्ड मे जाकर राधाकृष्णन ने आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी के मैनचेस्टर कालेज मे भाषण दिया। इसके बाद वे दूसरे देशो मे भी बुलाए जाने लगे। उन्हे सत्य सम्मान निम त्रण दिया जाता। उनके व्यारयान का लोगो पर प्रभाव पडता और वे

मन मुग्ध से रह जाते।

इसी बीच राधाकृष्णन की दूसरी पुस्तक भी प्रकाशित हो गई। यह भी इगलिश मे लिखी गई थी और इसका नाम द हिन्दू व्यू आफ लाइफ है। बस फिर क्या था पूरे ससार मे धूम मच गई और राधाकृष्णन के लिए कहा जाने लगा कि वे अद्वितीय दार्शनिक हैं।

राधाकृष्णन अध्यापन के साथ ही साथ लेखन कार्य भी कर रहे थे। सभी पश्चिमी देश उनके हिन्दू धर्म और दर्शन की तारीफ करते। उनकी भाषा सरल है और वे अपनी बात सहज ढग से लोगो को समझा देते। यह उनकी विशेषता थी।

राधाकृष्णन ने हिन्दू धम की गहरी विवेचना की। उन्होने उसका महत्व बहुत ही सरल ढग से समझाया।

कहना तो यह चाहिए कि सर्वपल्ली डाक्टर राधाकृष्णन ने यूरोप और एशिया को अपने साहित्य की डोर मे बाधकर एक कर दिया। यह काम बहुत कठिन था जिसे उन्होने आसानी के साथ कर डाला।

ससार के सभी लेखक, सभी विद्वान्, सभी विचारक, सभी सम्पादक और सभी पत्रकार उनसे पूर्णतया प्रभावित हुए और सभी के लिए वे चर्चा का एक विषय बन गये।

डा० राधाकृष्णन ने एक लम्बे समय तक आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी मे पढाया। इस बीच मे इग्लैण्ड के गिरजाघरो मे भाषण भी होते रहते थे। वे कहते कि ससार मे अगर सुखी रहना चाहते हो, तो सबसे पहले धर्म को समझो।

आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय मे राधाकृष्णन सन् 1952 ई० तक रहे। उनका सम्पर्क भारत से कभी नहीं छूटा। सन् 1939 ई० में उन्हे भारत बुलाया गया। वे बनारस के हिन्दू विश्वविद्यालय में उपकुलपति बना दिये गये।

सन 1952 ई० मे राधाकृष्णन को एक महान् दर्शनीय होने के नाते भारत का उपराष्ट्रपति बना दिया गया। इससे पहले वे शिक्षा, विज्ञान और सस्कृति कार्य मे व्यस्त रहे।

डाक्टर राधाकृष्णन सन् 1949 ई० मे भारत के राजदूत बनकर रूस गये। वे वहा की राजधानी मास्को मे रहे।

राधाकृष्णन स्टालिन से मिले। दोनो एक-दूसरे से बहुत प्रभावित हुए। स्टालिन को यह मानना पडा कि महात्मा गाधी और महात्मा बुद्ध मे कोई भी अन्तर नही है। दोनो की नित्य अहिंसा है और अहिंसा बहुत बडा वृत्त है।

अब राधाकृष्णन उपराष्ट्रपति बन गये थे। वे राजसभा की अध्यक्षता भी करते।

राधाकृष्णन ने एक पुस्तक लिखी थी। उसका नाम है दि फिलासफी ऑफ रवीन्द्रनाथ टैगोर। इस पुस्तक से वे दर्शनशास्त्र की चोटी पर पहुच गये थे।

सन् 1937 ई० मे राधाकृष्णन को अग्रेज ब्रिटिश सरकार ने सर की उपाधि दी लेकिन राधाकृष्णन ने जब देश आजाद हो गया तो इस सर की उपाधि को त्याग दिया।

सन् 1954 ई० मे सर्वपल्ली डाक्टर राधाकृष्णन को भारत रत्न की उपाधि से अलकृत किया गया। इस अलकरण को उन्होने सहर्ष स्वीकार किया।

इसी साल 1954 ई० मे जर्मनी ने उन्हे जर्मन पोअर ले मैरिट की उपाधि दी। अगले साल सन् 1955 ई० मे फ्रास ने डाक्टर राधाकृष्णन को एक उपाधि से सम्मानित किया। जिसका नाम पेअर ला मैरिट था।

और 1957 ई० मे मगोलिया ने उन्हे मास्टर आफ विजडम की उपाधि दी। जर्मनी ने एक उपाधि और दी इसका नाम गोयथे प्लेक्यूटे था।

सन् 1961 ई० मे जर्मन बुक ट्रस्ट ने उन्हे पीस प्राइज दिया।
इग्लैण्ड ने सन् 1964 ई० मे डा० आफ मैरिट की उपाधि दी।

इसी तरह मरने से कुछ दिन पहले ही राधाकृष्णन को
ट्रैम्पलटन पुरस्कार भी मिला था।

राधाकृष्णन महान दार्शनिक थे, प्रकाण्ड विद्वान थे। उनकी
प्रतिभा का लोहा पूरा ससार मानता था और मानता रहेगा।
वे अपने समय से बहुत आगे थे। उस हीरे को परखने वाले
जोहरी इस दुनिया के बाजार मे बहुत कम थे।

राधाकृष्णन ने गीता का अनुवाद किया है। यह अग्रेजी मे है
और बहुत ही सरल भाषा मे है। इगलिश भाषा पर उनका पूर्ण
अधिकार था।

गीता का अनुवाद राधाकृष्णन ने महात्मा गाधी को भेंट
किया था। उन्होने बहुत सी पुस्तके लिखी हैं जो सब की सब
लोकप्रिय हुई। उनका भाषण धारा प्रवाह चलता। वे श्रोताओ
पर मोहनी डाल देते। उनका भाषण इतना सरल होता कि लोगो
की समझ मे आसानी से आ जाता और उसका गहरा प्रभाव भी
पडता।

राधाकृष्णन लम्बे कद के थे। उनका बदन छरहरा था।
उनका चेहरा लम्बा था। वे सिर पर हमेशा सफेद पगडी बाधते
थे। उनका ललाट उन्नत था। उनकी आखो मे चमक थी, वे
देखने मे आकर्षक लगते थे।

वे सफेद अचकन और धोती पहनते। उनका स्वभाव सरल
था और वे सभी से हसकर मिलते और पत्रकारो से तो मिलने
मे तनिक भी सकोच नही करते थे। वे बच्चो के समाज मे भी
प्रसन्न दिखलाई पडते।

1975 ई० मे उनकी मृत्यु हो गई। यह अप्रैल का महीना था।

और 16 तारीख थी। मद्रास के नर्सिंग होम में उन्होंने संसार से विदा ली।

इस तरह सर्वपल्ली डाक्टर राधाकृष्णन मरकर भी आज अमर हैं। उनमें सर्वतोमुखी प्रतिभा थी। वे पूरे संसार के लिए एक प्रेरणास्रोत थे।

चन्द्रशेखर वेंकटरमण

सन् 1954 ई० मे सबसे पहले भारतरत्न की उपाधि चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य को दी गई। उसके बाद दूसरा अलकरण भारतरत्न का सर्वपल्ली डाक्टर राधाकृष्णन को मिला। तीसरा भारतरत्न का अलकरण चन्द्रशेखर वेंकटरमन को दिया गया।

ये एक बहुत बडे वैज्ञानिक थे। इनका जन्म 6 दिसम्बर 1888 मे हुआ था। ये त्रिचनापल्ली मे एक गाव मे पैदा हुए। इस गाव का नाम थिरुवणिइक्कवल है। यह तमिलनाडु मे है। जिसे आजकल मद्रास कहते है।

इनके पिता का नाम श्री चन्द्रशेखर अय्यर था। ये अय्यर परिवार मे पैदा हुए थे। इनकी माता का नाम श्रीमती पारवर्ती अम्मल था।

रमण के पिता वही गाव के स्कूल मे अध्यापक थे। उनके पाच लडके थे और तीन लडकिया। परिवार बडा था और आमदनी कम थी। यह समस्या उनके सामने हमेशा बनी रहती।

जब चन्द्रशेखर रमण तीन साल के थे तब अचानक इनके पिता की तरक्की हो गई। वे गाव से विशाखापटनम चले गये और वहा मिसेज ए० वी० एनभ कालिज मे गणित तथा भौतिकी के प्रोफेसर हो गये अब उनका परिवार विशाखापटनम मे रहने लगा।

चन्द्रशेखर अय्यर को महीने मे 85 रुपये मिलते। परिवार का पालन बडे आराम से होता। वे भौतिकी पढाते, गणित

समझाते और दर्शनशास्त्र भी पढाते थे। उसमे भी उनकी बहुत गहरी रुचि थी। उनका घरेलू पुस्तकालय था। जिसमे इन विषयो की बहुत-सी पुस्तकें थी।

वेंकटरमण के पिता वायलन भी खूब बजाते थे। उनकी सगीत मे दिलचस्पी थी।

पिता की इन सब बातो का प्रभाव चन्द्रशेखर वेंकटरमण पर बहुत गहरा पडा। वे वायलन बजाने लगे और पढने मे उनकी रुचि बहुत अधिक बढ गई।

वेकटरमण ने 11 साल की उम्र मे ही हाईस्कूल पास कर लिया। इसके बाद इण्टरमीडियेट की परीक्षा मे भी प्रथम आये। उन्हें छात्रवृत्ति मिलने लगी।

वे अपनी पढाई का खर्चा स्वय खर्च करने लगे। मद्रास से उन्होने 15 साल की उम्र मे बी० ए० कर लिया। वे इगलिश और भौतिकी मे प्रथम श्रेणी मे पास हुए थे। इसीलिए उन्हे स्वर्ण पदक मिला।

चन्द्रशेखर वेकटरमण धोती और कमीज पहनते। सिर पर गोल टोपी लगाते। अधिकाश नगे पैर रहते। वे दुबले-पतले शरीर के युवक थे। वे दक्षिणी ब्राह्मण थे। वे एम० ए० हो गये। लेकिन देखने वाला उन्हें देखकर यकीन नही कर सकता था।

कुछ अध्यापको ने चन्द्रशेखर वेकटरमण की प्रतिभा को पहचाना। वे आपस मे एक-दूसरे से कहने लगे कि यह लडका हमसे भी आगे है और बहुत आगे।

वेकटरमण की सूझ गहरी थी। विज्ञान मे उनकी विशेष रुचि थी और वही उनका मुख्य विषय था। उन्होने अपने घर मे भी एक लैबोरेटरी बना रखी थी। उसमे नित्य नये प्रयोग करते रहते। इसमे उन्हें बहुत आनन्द आता।

सन् 1906 ई० मे लदन से एक पत्रिका प्रकाशित होती थी।

जिसका नाम दि फिलासफिकल मैगजीन था। चन्द्रशेखर वेंकट रमण ने उसमे अपने लेख भेजने शुरू कर दिए।

श्री चन्द्रशेखर रमण वित्त विभाग की चयन परीक्षा देने के लिए तैयार हुए। इसमे उन्हे सफलता मिली।

उसी समय उनका विवाह हो गया। तब वे 18 वर्ष के थे। उनकी पत्नी 13 साल की थी। उनका नाम लोक सुन्दरी था। वे वीणा बहुत अच्छा बजाती थी।

दम्पति कलकत्ता मे आकर रहने लगे। वेंकटरमण वहा वित्त विभाग मे असिस्टेंट महालेखाकार थे। वे दफ्तर ट्राम से जाते। एक दिन वे द इण्डियन एसोसिएशन फार दी कल्टीवेशन ऑफ साइस के दफ्तर मे पहुच गये। वहा उनकी आशुतोष दे से भेट हुई। दोनो मे मित्रता हो गई। ऐसोसिएशन के मन्त्री अमृत लाल सरकार थे। उन्होने रमण की प्रतिभा को पहचाना और उन्हें अनुसधानशाला का काम सौप दिया।

वेंकटरमण खूब मन लगाकर काम करने लगे। उन्होने एक पत्रिका निकाली। जिसका नाम इण्डियन जनरल ऑफ फिजिक्स था।

दम्पति मे आपस में बडा लगाव था। दोनो एक-दूसरे को बहुत अधिक प्रेम करते। लोक सुन्दरी वीणा बजाने मे निपुण थी और रमण वायलन बजाते। वे अपने मस्तिष्क की थकान सगीत से दूर करते।

कुछ दिन बाद चन्द्रशेखर वेंकटरमण को कलकत्ता विश्वविद्यालय मे बुला लिया गया। तब वहा के उपकुलपति श्री आशुतोष मुखर्जी थे।

वेंकटरमण विश्वविद्यालय मे भौतिकी पढाने लगे। एक तो विश्वविद्यालय से वेतन बहुत कम मिलता और दूसरे रमण की प्रगति मे बाधा पड रही थी। वे प्रयोग नही कर पाते और अनु-

सधार से भी दूर होते चले जा रहे थे।

आशुतोष उनके मित्र थे। उन्होने रमण जी को सलाह दी कि वे भारत छोडकर इग्लैंड चले जाये और वहा जाकर आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी मे पढाय।

रमण जी इग्लैंड आ गये। वहा उनकी बडे-बडे वैज्ञानिको से भेट हुई। उन्होने सबको प्रभावित किया।

वहा से लौटते समय रमण ने नीले भूमध्य सागर का रग देखा। उन्हे प्रेरणा मिली और वे उस पर प्रयोग करने के लिए सोचने लगे। उन्होने कई बोतलो मे वह पानी भर कर रख लिया।

रमण जी जब इग्लैंड से भारत आये तो प्रकाश के आलोक पर प्रयोग करने लगे। सन 1922 ई० मे इन्होने एक निबन्ध लिखा। इसे काम्पटन प्रभाव का भी आविष्कार कहा जाता है।

सन् 1926 ई० मे रमण वाल्टेयर गये। वहा काम्पटन रमण फार्मूला सबके सामने रखा उनकी प्रसन्सा हुई।

कुछ दिन बाद उस आविष्कार की चर्चा एसोसियेटेड प्रेस ने की। वेकटरमण ससार के एक महान वैज्ञानिक घोषित कर दिये गये।

सन् 1930 ई० मे वेकटरमण को नोबेल पुरस्कार मिला।

सन् 1933 ई० मे वे टाटा इस्टीट्यूट के निदेशक बना दिये गये। वे कलकत्ता नही छोडना चाहते थे, लेकिन फिर छोडना पडा।

सन् 1934 ई० मे वेकटरमण ने एक विज्ञान अकादमी की स्थापना की। ये भारतीय विज्ञान अकादमी कहलाती थी। इस तरह 20 साल तक इसमे काम करने के बाद वेंकटरमण ने एक पत्रिका निकाली। यह सर्वश्रेष्ठ पत्रिका थी और इसका अच्छा

स्वागत हुआ।

रमण जी हीरो पर अनुसधान करना चाहते थे। उनकी इसमे विशेष रुचि थी। वे अपनी शोधशाला मे हीरे पर प्रयोग करने लगे। उनके ये प्रयोग जौहरियो के लिए बहुत ही लाभ के हुए।

सन् 1948 ई० मे वेकटरमण को राष्ट्रीय प्रोफेसर बनाया गया। उन्होने एक इस्टीट्यूट भी खोला और अपनी सारी रकम उसमे लगा दी। मगर कोई फायदा नही हुआ, उनका धन चला गया।

अब चन्द्रशेखर वेंकटरमण ने यह योजना बनाई कि वे पूरे देश का भ्रमण करेंगे। साथ ही धन भी इकट्ठा करेंगे, क्योकि धन की उन्हें आवश्यकता थी।

अपने इस कार्य मे रमण को सफलता मिली। उनका इस्टीट्यूट चलने लगा।

तभी वेंकटरमण को राजधानी देहली मे बुलाया गया। उन्हें भारतरत्न की उपाधि मिली। वे उपराष्ट्रपति बनाये जाने वाले थे। लेकिन इसका उन्होने विरोध किया। उनका कहना था कि मैं वज्ञानिक हू, उपराष्ट्रपति नही बनूगा।

सन् 1977 ई०मे सूरज निकलने के पहले ही 21 नवम्बर को चन्द्रशेखर वेकटरमण इस ससार से विदा हो गये। अपने पीछे वे अपनी कीर्ति छोड गये है जो उनके नाम के साथ हमेशा अमर रहेगी।

चन्द्रशेखर वेंकटरमण को न जाने कितने पुरस्कार मिले। सन् 1930 ई० मे उन्हे ससार का माना हुआ पुरस्कार नोबेल पुरस्कार मिला। सन् 1924 मे लदन से पुरस्कार मिला। सन् 1957 मे सोवियत सघ ने उन्हें लेनिन पुरस्कार दिया।

वे गौरव के पात्र थे। मगर उनके अन्दर अहंकार की भावना नहीं थी। वे सरल स्वभाव के और मृदुभाषी थे। उनकी बात का प्रभाव सुनने वाले पर अवश्य पड़ता। वे सरलता के साथ अपनी बात समझा देते थे। यह सरलता ही उनका विशेष गुण थी। यही कारण था कि उनसे कोई भी नाराज नहीं रहता था। वे सबके प्यारे थे और सभी को उन पर गर्व था।

डा राजेन्द्र प्रसाद

राजेन्द्र प्रसाद का जन्म 3 दिसम्बर सन् 1884 ई० मे हुआ। वे कायस्थ परिवार मे पैदा हुए थे। उनका गाव जिरादेई बिहार के सारन जिले में है, उनके जन्म के एक साल बाद भारत मे सन् 1885 ई० मे काग्रेस ने जन्म लिया। वे पाच भाई बहिन थे। तीन बहनें और दो भाई। राजेन्द्र प्रसाद सबसे छोटे थे। उनके पिता का नाम महादेव सहाय था।

राजेन्द्र बाबू के पिता एक विद्वान पुरुष थे। सस्कृत और फारसी भाषा के अच्छे जानकार थे। वे अखाडे जाते और पहलवान कहलाते थे। वे घोडे की सवारी करते, बन्दूक भी चलाते थे। उनका निशान कभी चूकता नही था।

लेकिन राजेन्द्र बाबू सरल स्वभाव के थे। बचपन से उन्हें फारसी पढाई जाने लगी। घर पर एक मौलवी साहब आते थे। वे उन्हे फारसी की शिक्षा देते। हिन्दी पढने के लिए वे पाठशाला जाते। हिन्दी मे उनकी रुचि थी। उन्होने अपनी आत्मकथा भी हिन्दी मे ही लिखी है। वैसे अगर देखा जाए तो उस समय जिन महापुरुषो ने अपनी आत्मकथा लिखी। वे सब अग्रेजी मे हैं।

राजेन्द्र प्रसाद ने इस दिशा को बदल दिया। उन पर उनकी माता कमलेश्वरी का बहुत गहरा प्रभाव पडा था। इसीलिए वे रामायण और महाभारत का अध्ययन करने लगे। वे जब कक्षा पाच मे पढते थे। तभी उनका विवाह हो गया। तब उनकी अवस्था तेरह साल की थी।

राजेन्द्रप्रसाद ने हाईस्कूल पास किया। उसमे वे प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण हुए थे। इसी तरह पढाई मे आगे वढते चले गए। फेल होना तो दूर रहा वे प्रथम ही आये और एम० ए० हो गए।

इन्होने अर्थशास्त्र, इतिहास, अग्रेजी और दर्शनशास्त्र पढा। एम० ए० मे उनका विषय अग्रेजी था। वे आई० सी० यस की परीक्षा पास करने के लिए इग्लैण्ड जाना चाहते थे। तभी उनके पिता की मृत्यु हो गई और उनका जाना रुक गया।

राजेन्द्र प्रसाद ने विहार मे एक स्टूडेन्ट्स कार्फेंस का आयोजन किया। इसका नाम बिहारी स्टूडेन्ट्स कार्फेंस रखा गया। यह उनके जीवन का सबसे पहला मौका था जब उन्होने भाषण दिया।

सन् 1911 मे वे काग्रेस मे आ गए। वकालत पास कर चुके थे इसलिए कलकत्ता मे ही वकालत करने लगे। उनकी वकालत चल निकली। उनका नाम होने लगा। आशुतोष मुखर्जी ने यह देखा तो उनको कानून पढाने के लिए विधि कालेज मे बुला लिया।

राजेन्द्र प्रसाद की भेट गोपाल कृष्ण गोखले से हुई। उन्होने सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया नाम की एक सस्था बनायी थी। राजेन्द्र प्रसाद उससे बहुत अधिक प्रभावित हुए।

राजेन्द्र प्रसाद ने गोखले की सस्था को स्वीकार कर लिया। लेकिन फिर कलकत्ता चले आए और वकालत करने लगे।

सन् 1916 ई० मे पटना मे हाईकोर्ट बना। राजेन्द्र प्रसाद कलकत्ते से पटना आ गए और वहा हाईकोर्ट मे आकर अपनी वकालत करने लगे।

तभी पटना मे बिहार विश्वविद्यालय की भी स्थापना हुई। राजेन्द्र प्रसाद को विश्वविद्यालय मे आमन्त्रित किया गया और वे वहा की सैनेट के सदस्य बन गए।

लखनऊ मे काग्रेस का अधिवेशन हो रहा था। वही पर राजेन्द्र प्रसाद की भेंट महात्मा गाधी से पहली बार हुई। गाधी जी दक्षिण अफ्रीका से लौट आए थे। देश मे उनका सम्मान हो रहा था। राजेन्द्र प्रसाद भी उनसे बहुत अधिक प्रभावित हुए। उनकी समझ मे अच्छी तरह आ गया कि महात्मा गाधी एक त्याग मूर्ति है। वे अहिंसा के प्रतीक महात्मा गौतम बुद्ध की तरह हैं। इसीलिए उनको उनसे अटूट श्रद्धा हो गई।

काग्रेस का प्रस्ताव था कि उसे विधान परिषदो मे जाना चाहिए। लेकिन राजेन्द्र प्रसाद इसके खिलाफ थे।

पटना नगर पालिका की भी राजेन्द्र प्रसाद जी ने थोडे समय तक सेवा की। वे नगर पालिका के चेयरमैन थे।

गया मे बोध गया के मन्दिर की समिति का राजेन्द्र प्रसाद ने सगठन किया। इस पर काग्रेस मत्रिमण्डल ने अपना त्याग पत्र इस समिति से दे दिया।

सन् 1930 ई० मे नमक सत्याग्रह मे शामिल हुए। उनके पीछे जनता चली। नारे लगाये जा रहे थे और नमक कानून का विरोध हो रहा था।

राजेन्द्र प्रसाद को गिरफ्तार कर लिया गया। जेल मे उनके साथ अच्छा व्यवहार नही हुआ। उन्हे भोजन लोहे के बर्तनो मे दिया गया।

इस जेल से जब राजेन्द्र प्रसाद हजारी बाग की जेल मे आए, तो कई माने हुए सत्याग्रही लोगो से उनकी भेंट हुई।

जेल मे राजेन्द्र प्रसाद लिखने और पढने मे व्यस्त रहते। वे सभी विषय की पुस्तकें पढते और सबका आनन्द लेते। वे बहुत अच्छे पाठक थे। इसमे कोई सदेह नही।

जेल मे बाबू राजेन्द्र प्रसाद गाधी जी के लेखो को इकट्ठा कर रहे थे। उन्होने उनका एक सग्रह बनाया और उस पर अपनी

भूमिका लिखी।

जब महात्मा गाधी अछूतोद्धार का आन्दोलन चला रहे थे। तो राजेन्द्र प्रसाद ने चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के साथ दक्षिण भारत की यात्रा की। उन्होने अछूतो को मन्दिरो मे जाने के लिए पूरा-पूरा प्रयास किया। उन्हे बहुत हद तक सफलता भी मिली और उनका यश फैल गया।

सन् 1934 मे जनवरी के महीने की 15 तारीख को बिहार मे एक बहुत बडा भूचाल आया। हानि मे धन और जन दोनो की मात्रा बहुत अधिक थी। तब राजेन्द्र प्रसाद ने समाज-सेवी सस्थाए खोली। जनता को राहत पहुचाई जाने लगी।

बम्बई मे काग्रेस का अधिवेशन हुआ और राजेन्द्र प्रसाद को उसका अध्यक्ष बनाया गया। इसमे वे अपनी पत्नी राजवशी देवी के साथ शामिल हुए थे।

सन् 1942 ई० के अगस्त महीने की क्रान्ति इतिहास मे हमेशा अमर रहेगी। तब भारत छोडो आन्दोलन चल रहा था। जनता का एक नया महामन्त्र बन गया था कि करो या मरो।

ऐसे मे देश के सभी बडे नेता राजनैतिक कैदी बना लिए गए थे। उन्हे जेलो मे भेज दिया गया। बाबू राजेन्द्र प्रसाद भी बन्दी बनाए गए। लेकिन आन्दोलन चलता रहा और जनता नारे लगा-लगा कर कहती रही—"एक दो! लाल टोपी फेंक दो। अग्रेजो भारत छोडो। स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम स्वराज लेकर रहेगे।"

पूरे देश की हालत बदल गई थी और अग्रेजो के पैर उखडने लगे।

ऐसे मे ही सन् 1943 ई० मे बगाल मे भयानक अकाल पडा। इस महाकाल मे हजारों की सख्या मे लोग भूख से मरने लगे। तब राजेन्द्र प्रसाद जेल मे थे। उन्होंने एक पुस्तक

लिखी। जो अंग्रेजी में थी और जिसका नाम द इण्डिया डिवाइडेड है।

जेल से छूटने पर यह पुस्तक हिन्दी में भी छपी।

सन् 1946 ई० में राजेन्द्र प्रसाद को भारत की अन्तरिम सरकार ने खाद्य तथा कृषि मंत्री बनाया।

देश मे महगाई बढ रही थी। काला बाजार चल रहा था। मुनाफा खोरी के साथ ही साथ घूसखोरी भी बहुत ज्यादा बढ गई तब राजेन्द्र प्रसाद ने एक अभियान चलाया। जिसका प्रमुख नारा था—"अन्न अधिक उपजाओ।"

सन् 1946 ई० में ही बाबू राजेन्द्र प्रसाद विधान सभा के अध्यक्ष चुन लिए गए।

सन् 1950 ई० मे मंगलवार का दिन था और तारीख चौबीस जनवरी थी। ऐसी शुभ वेला में राजेन्द्र प्रसाद जी को देश का प्रथम राष्ट्रपति बनाया गया। उन्हे देशरत्न की उपाधि मिली।

26 जनवरी को हमारे पहले राष्ट्रपति ने अपने पद की शपथ ग्रहण की। वायस रीगल लॉज को राष्ट्रपति भवन की संज्ञा मिली। उसके हरे गुम्बद पर तिरंगा झण्डा फहराया गया।

राजेन्द्र प्रसाद का लिबास साधारण था। वे देखने मे एक किसान लगते थे। भवन के सभी कर्मचारी चौंककर रह गए। सवेरा होते ही राजेन्द्र प्रसाद चरखा कातने लगते। उनके कार्यालय मे भी सादगी ही रहती। वे शाकाहारी थे। बहुत ही साधारण भोजन करते।

शाम होते ही राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद मुगल उद्यान मे चले जाते। वहा राम ध्वनि का कीर्तन करते। वे वहा बच्चे इकट्ठा कर लेते और उनके साथ राम ध्वनि गाते।

राजेन्द्र प्रसाद को दुबारा फिर राष्ट्रपति बनाया गया। उन्होने अपने पद का भार पूरी ईमानदारी के साथ संभाला।

हमेशा वे सादे और सरल ही बने रहे।

सन् 1962 ई० को मई के महीने मे वे पटना चले आए और

सदाकत आश्रम मे निवास करने लगे।

राजेन्द्र बाबू एक उच्चकोटि के लेखक थे उनका चम्पारन सत्याग्रह का इतिहास बहुत प्रसिद्ध है। दूसरी पुस्तक है महात्मा गाधी के चरणो मे। इसी तरह एक पुस्तक और है। जिसका नाम विभाजित भारत है।

ये सभी पुस्तकें अग्रेजी मे लिखी गई हैं। इन्हे लोकप्रियता मिली और ये अपने मे अत्यधिक प्रसिद्ध है।

डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने आत्मकथा हिन्दी मे लिखी है। यह सन् 1957 ई० मे लिखी गई थी।

भारत ने ऐसे महापुरुष को एक सर्वोच्च अलकरण दिया। यह उनका विशेष सम्मान था और वे इसके अधिकारी थे।

यह भारतरत्न की उपाधि थी। जिससे उन्हे अलकृत किया गया। देशरत्न की उपाधि उन्हे इससे पहले ही मिल चुकी थी।

सन् 1963 ई० मे बाबू राजेन्द्र प्रसाद इस लोक से विदा हो गये। सदाकत आश्रम सूना हो गया और लोग कहने लगे कि बिहार सूना हो गया। देश के लोगो ने कहा कि भारत सूना हो गया।

मगर सच बात तो यह है कि ससार सूना हो गया था। पूरे विश्व मे उनके शोक का दुख मनाया गया। वे भारत के ही नही, ससार के भी बहुत प्यारे थे।

पटना मे जो सदाकत आश्रम है। जिसमे राष्ट्रपति पद से अवकाश लेने के बाद बाबू राजेन्द्र प्रसाद रहते थे, उसी आश्रम मे उनकी समाधि बनाई गई है। जिसे देखने के लिए हजारो की सख्या मे लोग रोज आते।

यह समाधि नही एक तीर्थ है। एक ऐसे देवता की समाधि है। जो देश के लिए पैदा हुआ और देश के लिए मरा। जिसने

सादगी के अलावा और कुछ जाना ही नही जबकि वह एक महान् पुरुष था। भारत जैसे विशाल प्रजातन्त्र का पहला राष्ट्रपति था। दुबारा भी वे निर्विरोध और सर्वसम्मति से राष्ट्रपति निर्वाचित हुए।

डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद का नाम इतिहास के स्वर्णाक्षरो मे लिखा गया है। उनके जीवन मे ही उनकी पूजा होती थी और अब तो राष्ट्र उनका भक्त बन गया है।

गोविन्द वल्लभ पंत

पण्डित गोविन्द वल्लभ पंत का जन्म 1887 ई० में हुआ था। इसी साल इग्लैंड की महारानी विक्टोरिया के राज्य की रजत जयन्ती मनायी गई। इससे दो साल पहले ही कांग्रेस शुरू हुई थी।

गोविन्द वल्लभ पंत का बचपन ननिहाल में बीता। उनके पिता गढ़वाल में रहते थे। गोविन्द वल्लभ चकाता गांव में पढ़ते थे।

फिर गोविन्द वल्लभ पंत अपनी माता के साथ पिता के पास आ गए और वहीं रहकर पढने लगे। हाईस्कूल उन्होंने प्रथम श्रेणी में पास किया। इण्टरमीडिएट में भी बहुत अच्छे नम्बर आए थे। इसीलिए उन्हें छात्र वृत्ति मिलने लगी।

फिर सन् 1905 ई० में वे आगे पढने के लिए इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में आ गए।

पंत जी बोर्डिंग हाउस के एक कमरे में रहते थे। वे पढ़ाई के अलावा समाज-सेवा में भी रुचि लेते। उसी साल विदेशी कपड़ों की होली जलाई गयी। विदेशी माल का बहिष्कार हुआ। बग-भंग से लोग बहुत ज्यादा नाराज थे। भारत की जनता अंग्रेजों से पूरी तरह खिलाफ हो गई थी और उसकी बुराई कर रही थी। इसी साल दिसम्बर के महीने में बनारस में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। पंत जी इसमें स्वयं सेवक बनकर काम करते रहे। उनका गोखले से परिचय हुआ।

अब पंत जी बी० ए० के छात्र थे। यह उनका आखिरी साल था। तभी प्रयाग में एक सभा हुई। इसके अध्यक्ष पण्डित मोती लाल नेहरू थे। पंत जी ने अपना भाषण दिया। उन्होंने नेताओं के भाषण सुने। जिससे उन्हें प्रेरणा मिली। उन्होंने निश्चय कर लिया कि पढ़ने के बाद वे सरकारी नौकरी नहीं करेंगे।

गोविन्द वल्लभ पंत वकील बन गए। वे प्रथम उत्तीर्ण हुए थे और उन्हें स्वर्णपदक भी मिला। यहीं उनका परिचय पुरुषोत्तम दास टण्डन से हुआ। वे कैलाशनाथ काटजू से भी मिले। आचार्य नरेन्द्र देव भी यहीं उनके मित्र बने। फजल अली भी उनके दोस्त बन गए। वे अखबार बहुत पढ़ते थे। यह उनका स्वभाव बन गया था। हिन्दी और अंग्रेजी दोनों के ही पत्र उन्हें बहुत प्रिय थे।

जब गोविन्द वल्लभ पंत 12 वर्ष के थे। तभी से पत्र और पत्रिकाएं पढ़ने का नियम बन गया था।

तब देश में हिन्दी और अंग्रेजी पत्रों का जोर था। उर्दू के पत्र और पत्रिकाएं भी निकलतीं, लेकिन उनकी संख्या न के बराबर थी।

अन्य भाषा के पत्र प्रादेशिक थे जो केवल अपने प्रान्त में ही बिकते।

बंगला के प्रसिद्ध लेखक बंकिम चन्द्र चटर्जी के उपन्यास आनन्दमठ का गोविन्द वल्लभ पंत पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। उसके गीत बन्दे मातरम् ने उनका मन मोह लिया। वे अंग्रेजी का अध्ययन बराबर करते ही रहे। जिसमें उन्हें पूरी सफलता मिली।

पंत जी ने सबसे पहले बनारस में अपनी वकालत का आरम्भ किया। कुछ दिन बाद ही उनको वहां के म्युनिसिपल बोर्ड का सदस्य बना दिया गया। ऐसे ही समय में उन्होंने एक हाई स्कूल खोल दिया। इसके अतिरिक्त एक साप्ताहिक पत्र भी निकाला।

जिसका नाम था—'शक्ति।'

गोविन्द वल्लभ पत बेकारी पसन्द नही करते थे। वे कहते थे कि जब सरकारी अफसरो को उनका काम करने के लिए चपरासी मिलते हैं तो फिर वे गरीब लोगो को अपना गुलाम बनाकर काम क्यो लेते हैं।

इस तरह दुखी और परेशान जनता पत जी के साथ हो गई और वह उन्हें अपना नेता मानने लगी।

अब पत जी इलाहाबाद हाई कोर्ट मे वकालत करने लगे। वे नामी और बहुत बडे वकील बन गए थे।

इलाहाबाद हाई कोर्ट मे गोविन्द बल्लभ पत की पण्डित मोती लाल नेहरू से भेंट हुई। वही मदन मोहन मालवीय से भी उनकी भेंट हुई।

सन् 1918 ई० मे काग्रेस और गोरी सरकार की सीधी टक्कर हो गई।

सन् 1937 ई० मे भारत मे उत्तरदायित्व सरकार बनी।

सन् 1922 मे पत जी का मन वकालत से हट गया।

सन् 1921 ई० मे काग्रेस का अधिवेशन अहमदाबाद मे हुआ था। तभी काकोरी काण्ड हुआ था।

पत जी काग्रेस के होकर रह गए। उन्होंने वकालत हमेशा हमेशा के लिए छोड दी।

गाधी इरविन समझौता हो जाने से राजनैतिक बदियो को जेल से छोड देने के लिए कहा गया। यह कार्य पत जी को सौंपा गया था कि वे सरकार से बराबर मिलते रहे।

मगर ऐसा कुछ भी नही हो पाया। लदन मे गोलमेज सभा हुई थी। जब वहा से भारतीय नेता लौट कर आए तो देश मे आते ही उन्हे फिर गिरफ्तार कर लिया गया।

कानपुर मे बहुत बडा सकट आ गया। कपडा उद्योग खतरे

मे पड गया। नगभग साठ हजार मजदूर बेकार हो गए थे। जब गोविन्द वल्लभ पत उत्तर प्रदेश के मुखमत्री बने थे। तब सबसे पहले उन्होने इसी समस्या को अपने हाथ मे लिया और इसका समाधान करने लगे।

मन् 1939 इ० मे सितम्बर के महीने मे दूसरा विश्व महा युद्ध शुरु हो गया।

सन् 1943 ई० मे युद्ध ने भयानक रूप ले लिया। कांग्रेस नेता सत्याग्रह कर रहे थे। वे आजादी माग रहे थे। इसीलिए उन्हें गिरफ्तार किया जा रहा था। पत जी भी गिरफ्तार हुए और उन्हें एक साल की सजा हो गई।

सन् 1942 ई० मे विश्व महायुद्ध ने तहलका मचा दिया। भारत में क्रांति का दौर जोर से चल पडा। बम्बई में अधिवेशन हुआ। वही पत जी को गिरफ्तार कर लिया गया। पत जी जेल मे अध्ययन करते रहे। वे चरखा कातते, कुछ लिखते भी। चार साल का समय उन्होने किसी तरह व्यतीत कर दिया।

जब देश आजाद हुआ। तो पण्डित गोविन्द वल्लभ पत को उत्तर प्रदेश का मुख्य मन्त्री बनाया गया।

सरदार पटेल की मत्यु हो जाने के बाद गृहमत्री का पद सभालने के लिए नेहरू जी ने गोविन्द वल्लभ पत से आग्रह किया और उन्हे अपने मन्त्रिमडल मे ले लिया। वे भारत के गृहमन्त्री बन गए।

गोविन्द वल्लभ पत को भारत रत्न की उपाधि से सन 1957 ई० मे अलकृत किया गया। ये सबसे पहले नेता थे। जो केन्द्र सरकार के मन्त्री थे और जिनको भारतरत्न मिला।

गोविन्द वल्लभ पत का निधन सन् 1961 ई० मे हुआ। यह मार्च का महीना था और सात तारीख थी। उस दिन हमने अपना एक अनमोल रत्न खो दिया। जिसे गोविन्द वल्लभ पत

कहा जाता है।

गोविन्द बल्लभ पंत एक महापुरुष थे। भारत के एक महान नेता थे। वे स्वतन्त्रता सग्राम के वीर सेनानी थे।

वे उच्चकोटि के विद्वान और लेखक थे। वे देश के लिए पैदा हुए और देश के लिए मरे।

वे निधनो और दुखियो के साथ थे, दयालु थे, अहिंसा के पुजारी थे। कर्म और धर्म ही उनकी सच्ची पूजा थी। ब्राह्मण होने के नाते वे अपने धर्म-कर्म को कभी नहीं भूलते। उनकी एक ही दिशा थी, वे कहते कि आगे बढो और पीछे घूमकर मत देखो। भारत गुलाम था। अब आजाद हो गया है। तो इसकी जडो को पसीने से सीचो। पसीना गुलाब बन जायेगा और तुम्हारे बदन मे खुशबू आने लगेगी।

कानपुर मे जब वे मुख्यमंत्री थे। एक बार ग्रीन पार्क मे आए। तो उनके सामने कानपुर मे विश्वविद्यालय का प्रस्ताव रखा गया।

इस पर पत जी हस दिए और हसते-हसते कहने लगे—"मैं चाहता हू कि निकट भविष्य मे ही मेरे देश की शिक्षित जनता शत-प्रतिशत आकडो मे हो जाए। कोई भी अशिक्षित न रहे, मेरी यही कामना है। कानपुर मे विश्वविद्यालय खुलेगा और जल्दी ही खुलेगा आप लोग उस शुभ दिन की प्रतीक्षा कीजिए।"

आज पत जी हमारे बीच मे नही हैं। लेकिन कानपुर विश्वविद्यालय बन गया है और वह अपने जन्म की कहानी अब भी याद कर रहा है।

पत जी के निधन से देश को जो हानि पहुची। इसका वर्णन नही किया जा सकता है।

देश ने एक हीरा खो दिया। जो कोहनूर या असली कोहनूर। वह पत्थर का नही, हाड मास का एक पुतला था।

मदर टैरेसा

अभी तक जितने भारत रत्न विजेताओ की कहानी कही गई है। वे सब के सब पुरुष थे। उन्होने देश भारतवर्ष के लिए महान त्याग किया था।

यह कहानी एक नारी की है। जो भारतीय नही थी, लेकिन फिर भी उसे भारतरत्न की उपाधि मिली।

इस नारी का नाम मदर टैरेसा था। इसे सन् 1980 ई० मे भारत रत्न की उपाधि मिली।

मदर टैरेसा का जन्म यूगोस्लाविया देश मे हुआ था। इस छोटे से नगर का नाम स्कोप्जे था। सन् 1910 की 27 अगस्त का दिन था।

मदर टैरेसा के पिता एक अल्बेनियन किसान थे। उन्होने पुत्री का नाम एग्नेस गोनवशावेजविशह् रखा।

सन् 1925 ई० मे यूगोस्लाविया के कुछ लोग भारत आ गए। मदर टैरेसा भी भारत आना चाहती थी। वे भारत आ गई। सन् 1929 ई० मे उन्हे बंगाल का सेवा काय सौप दिया गया अब उनका नाम टैरेसा पड गया था। कोई सिस्टर टैरेसा कहता और कोई मदर टैरेसा कहकर पुकारता।

कलकत्ते मे मदर टैरेसा को भूगोल पढाने का कार्य मिला। साथ ही समाज सेवा मे भी रुचि लेने लगी। उनकी लोक प्रियता बढने लगी और वे सबकी प्यारी बन गई।

सन् 1946 ई० मे मदर टैरेसा छुट्टिया मनाने दार्जिलिंग

गई। उन्होंने जो दृश्य देखे उनसे उनका हृदय दुखित हो उठा। वे दया की देवी थी। उनसे दूसरो का दुख देखा नही जाता था। यह उनका स्वभाव बन गया था।

मदर टेरेसा ने कलकत्ते की झुग्गी-झोंपडी वालो का उद्धार किया। वे गरीबो की मा बन गईं और मदर कहकर पुकारी जाने लगी। उनके लिए यह भी कहा जाने लगा कि वे विदेशी महिला अवश्य हैं। लेकिन भारत को अपनी जन्मभूमि समझती और उस पर जान देती हैं। उनकी एक ही विनय है, एक ही प्रार्थना है कि गरीबो को गले से लगा लो। भगवान तुम्हारा भला करेगा।

एक सज्जन थे माइकल गोम्स। वे मदर टेरेसा से पूरी तरह प्रभावित थे। उन्होने अपना घर दे दिया और मदर टेरेसा से कहने लगे कि आप इसमे अपना स्कूल चलाइए।

मदर टेरेसा का स्कूल चलने लगा। उनके सामने धन की समस्या थी और उसका कोई उपाय नही था। साहस उनके साथ था। उनका विश्वास ही उनका धन था।

कलकत्ता एक महान नगर था और अब भी है। दुनिया का सबसे बडा नगर आजकल जापान का टोकियो है। उसकी आबादी एक करोड से ऊपर है। दूसरे नबर का नगर है कलकत्ता, जिसकी आबादी बहुत ज्यादा है। तीसरे नम्बर का नगर लदन है यह किसी समय आबादी मे बहुत बडा था।

फिर बम्बई, न्यूयार्क, पेरिस, मास्को, शिकागो और बर्लिन आदि हैं।

कलकत्ता महानगर मे न जाने कितने लोग कीडे-मकोडो की तरह जी रहे थे। मदर टेरेसा ने उनका उद्धार किया।

पूरे देश मे मदर टेरेसा की चर्चा होने लगी और उनके लिए कहा जाने लगा कि वे एक प्रगतिशील महिला हैं। हमारे देश

भारतवर्ष के लिए बहुत कुछ कर रही हैं। उन्होंने अपना जीवन सेवा व्रत मे लगा दिया है।

सन् 1957 ई॰ मे मदर टैरेसा के पास पाच रोगी आए। ये सब के सब कोढी थे। इन्हे कुष्ठ का रोग था। ये भीख मांगकर किसी तरह अपना पेट पालते। इनके बदन से दुर्गन्ध आती। कोई भी इन्हें अपने पास खडा नही होने देता।

लेकिन मदर टैरेसा ने उन पाचो को छाती से लगा लिया। उनमे दया का समुद्र उमड आया।

अब मदर टैरेसा का घर एक कुष्ठ रोग सस्थान बन गया था। उसमे कोढियों की सख्या आए दिन बढने लगी। उन्हें समय पर भोजन दिया जाता। उनका इलाज होता। उनकी सफाई का भी विशेष ध्यान रखा जाता। उनके कपडे रोज बदले जाते। धन चन्दे से आ रहा था। लोग दिल खोलकर चन्दा देते और इस तरह मदर टैरेसा का हाथ बटा रहे थे।

मदर टैरेसा को सतोष था कि वे गरीबो के लिए कुछ कर रही हैं। उनका जीवन व्यर्थ नही है, वह किसी उपयोग मे आ रहा है।

मदर टैरेसा की चर्चा पूरे देश मे फैल रही थी। उन्होने परिवार नियोजन पर भी ध्यान दिया और उस पर गहराई के साथ विचार करने लगी।

मदर टैरेसा ने अपने ढग का एक परिवार नियोजन केन्द्र खोला। यहा प्राकृतिक ढग से परिवार नियोजन किया जाता। सन् 1970 ई॰ मे यह खुला था। इससे सैकडो स्त्री पुरुषो ने लाभ उठाया। इसकी चर्चा सारे देश मे हुई।

मदर टैरेसा ने इस क्षेत्र मे एक नया कदम भी उठाया। जिन लोगो के सतान नही होती, उन्हे सतान प्राप्त होनी चाहिए। अपने इस कार्य मे उन्हें पूरी सफलता मिली।

मदर टरेसा कलकत्ते मे ही सेवा काय नही करती बल्कि वे पूरे देश मे घूम-घूमकर सेवा कार्य किया करती । सभी देश-वासियों को उनसे श्रद्धा हो गयी थी । वे जहा भी जाती उनका सम्मान होता । उनकी बात मानी जाती और श्रद्धा से सुनी जाती।

मदर टेरेसा ने परिवार नियोजन का जो नया सूत्र प्राप्त किया था उसका केवल हमारे देश भारत मे ही प्रचार नही हुआ, बल्कि वह पूरे ससार मे फैलकर रह गया है।

सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे उनकी बनायी परिवार नियोजन प्रणाली चल रही है। पाकिस्तान और नेपाल में भी ऐसा है। इग्लड मे भी यही चल रहा है। यूगोस्लाविया आदि देशों में भी यही चल रहा है।

मदर टेरेसा को नोबलशान्त पुरस्कार मिला । यह पुरस्कार उन्हें सन् 1979 मे दिया गया था । 18 अक्टूबर को इन्हें सम्मानित किया गया । साथ ही एक लाख अस्सी हजार रुपये भी दिए गए।

मदर टेरेसा को दूसरा पुरस्कार रोमन मैग्सेस पुरस्कार मिला । यह सन् 1962 ई० में दिया गया था । फिलीपाइन और मनीला से भी इन्हें पुरस्कार मिले।

1971 ई० में उन्हें एक शान्त पुरस्कार मिला । यह पोपजान पुरस्कार था।

ऐसे ही इसी साल कैनेडी पुरस्कार मिला । इसी वर्ष अमेरिका के एक विश्वविद्यालय ने उन्हें उपाधि दी । इस उपाधि का नाम डाक्टर ऑफ हामन लैटर्स था । यह उपाधि एक कैथोलिक विश्व-विद्यालय ने दी थी।

भारत में मदर टरेसा को पण्डित जवाहर लाल नेहरू पुरस्कार मिला । उन्हें भारत रत्न की उपाधि भी दी गई । यह

उपाधि सन् 1980 में मिली। एक विदेशी महिला होने पर भी उन्होंने हमारे देश भारत से भारत रत्न का अलंकरण पाया। वे धन्य है और उन्हें सौभाग्य शालिनी कहा जायेगा।

इससे पहले सन् 1962 ई० में मदर टरेसा को पद्मश्री उपाधि मिली थी।

मदर टैरेसा के भ्रमण के लिए भारत सरकार ने सभी सुविधाएं दी हैं। पूरा देश उनके साथ है। सभी को उनसे श्रद्धा है। उनका कोई भी काय ऐसा नही कि जिसकी आलोचना की जाए। सभी काम सराहनीय हैं और वे बधाई की पात्रा हैं।

मदर टैरेसा का कहना है कि उन्होंने अब तक मिले सभी पुरस्कारो को इसलिए लिया है कि किसी की श्रद्धा को ठेस न लगे। किसी का कोमल हृदय बैठ न जाए। वैसे उन्हें कुछ भी नही चाहिए। उनका कहना है कि यह पानी भरी खाल है। जिंदगी का कोई भरोसा नही। जो कुछ भी कर सकते हो, जल्दी से जल्दी कर डालो और करते ही रहो। फिर समय नही मिलेगा। न जाने मौत की घडी कब आ जाए। देश के लिए, समाज के लिए, भलाई के काम करो। तुम्हारा कतव्य यही है और तुम्हारा जन्म इसीलिए हुआ है।

एक बात और है। मदर टरेसा यह भी कहती हैं कि इन पुरस्कारो से मुझे जो धन मिलता है। उसका मैं अपने लिए कोई भी उपयोग नही करती क्योंकि मेरी कोई जरूरत नही है और न मुझे धन चाहिए। मुझे तो जो धन मिलता है। उसे मैं सेवा काय में लगा देती हू। इससे मेरे कार्यो को सहयोग मिलता है और मुझे पूरा सतोष मिल जाता है।

कलकत्ता मे मदर टैरेसा को देवी कहा जाता है और देवी की तरह ही उनकी पूजा होती है। पूरे देश के लिए वह एक आदर्श महिला है और उनसे प्रत्येक को प्रेरणा मिलती है। वह एक

महान विभूति हैं। उन्होंने यूगोस्लाविया में जन्म लिया, लेकिन ऐसा लगता है कि वह भारत के लिए पैदा हुई हैं। इसीलिए उन्हें भारत रत्न माला का हार पहनाया गया है।

उनमें करुणा का सागर भरा है। उनकी जिन्दगी अपनी नहीं, दूसरों की है। वह हर हालत में प्रसन्न रहती, यह उनकी विशेषता है। उनके सामने गहन समस्या हो, वह चिंता के गहरे सागर में गोते लगा रही हो, लेकिन फिर भी मुस्कराती हुई मिलेंगी। उन्हें उदास कभी नहीं देखा गया।

इन्दिरा जी का बचपन आनन्द भवन मे बीतने लगा। वे चार साल की हो गईं। उनका नाम इन्दिरा प्रियदर्शनी रखा गया। वह सबका प्यार पाने लगी।

इन्दिरा देख रही थी कि विदेशी कपडे जलाये जा रहे हैं। विदेशी घोडे और कुत्ते भी हटा दिये गये हैं। उनकी छोटी बुआ कृष्णा का स्कूल जाना बन्द कर दिया गया है, क्योकि वह स्कूल अग्रेजी है।

विदेशी वस्तुओ को जलाया जाता तो पण्डित जवाहर लाल नेहरू भी इसमे आनन्द लेते।

इन्दिरा देखती कि जगह जगह पर सभा हो रही है। जुलूस निकाले जा रहे हैं। उस समय आनन्द भवन नेताओ का एक तीर्थ हो रहा था। चार छँ नेता तो हमेशा वहा बने रहते। दो आते और चार जाते। यह नित्य का नियम था।

एक बार महात्मा गाधी आनन्द भवन मे आए। तब इन्दिरा गाधी चार साल की थी वे फाक पहने थी। गाधी जी ने उन्हे गोद मे बैठा लिया और प्यार करने लगे। यह चित्र राजधानी देहली के राजघाट पर स्थित गाधी सग्रहालय मे आज भी मौजूद है।

राष्ट्र पिता देश के बापू और महात्मा मोहन दास करमचद गाधी बच्ची इन्दिरा को इन्दिरा प्रियदशनी कहकर पुकारते। उनका भी कहना था कि जवाहर लाल तुम्हारी यह बेटी बहुत ही होनहार होगी।

महात्मा गाधी नेहरू जी को बहुत स्नेह करते। यही कारण था कि इन्दिरा उनको बहुत प्यारी लगती।

आनन्द भवन से पहले मोतीलाल नेहरू ने एक भवन बनवाया था और उसका नाम स्वराज भवन रखा था। फिर जब आनन्द भवन बन गया, तो यह स्वराज भवन दान कर दिया गया। पण्डित मोतीलाल नेहरू ने इसे अखिल भारतीय काग्रेस

को दिया था।

हा तो कहना यह चाहिए कि उस समय आनन्द भवन नेताओ का एक बहुत बडा केन्द्र हो रहा था। बालिका इन्दिरा प्रियदर्शनी पर आने-जाने वालो का प्रभाव कुछ न कुछ अवश्य पडता। उस बच्ची की समझ मे अच्छी तरह आ गया था कि हमारा देश भारतवर्ष गुलाम है। अग्रेज उस पर हुकूमत कर रहे हैं। स्वराज्य मागा जा रहा है और उसी के लिए ये आन्दोलन हो रहे हैं।

इन्दिरा प्रियदर्शनी आनन्द भवन मे खेलती। अपनी हमजोली के बच्चे इकट्ठे करती। ये सब पास-पडोस के होते।

इन्दिरा प्रियदर्शनी इन बच्चो की एक सभा करती। उसमे वह अपना भाषण देती।

भाषण देने की कला बालिका इन्दिरा ने अपने दादा और पिता से सीखी थी।

जब इन्दिरा गाधी बारह साल की थी। तो उन्होने एक बाल सेवा बनायी। जिसे वानर सेना कहा जाता था।

आजादी की लडाई मे पूरे का पूरा नेहरू परिवार भाग ले रहा था। कमला नेहरू, स्वरूप रानी, विजय लक्ष्मी और कृष्णा, जवाहर लाल और मोतीलाल आन्दोलन मे भाग लेते जनसभा मे अपना भाषण देते।

इन्दिरा जी ने आरम्भ मे देहली मे शिक्षा पाई। वह एक किंडर गार्डन स्कूल था। उसके बाद वे इलाहाबाद आ गइ और वही आकर पढने लगी।

जब वे सात साल की हो गई, तो उनकी इस स्कूल से पढाई बन्द कर दी गई। वह मार्डन स्कूल था।

इसके बाद एक प्राइवेट स्कूल मे भेजा गया। वह भी अग्रेजी स्कूल था। इसे तीन अग्रेज महिलाए चला रही थी।

नेहरू जी इस स्कूल मे सन्तुष्ट नही थे। वे वहा से इन्दिरा जी को हटा लेना चाहते थे।

इसी बीच मे कमला नेहरू बीमार रहने लगी। डाक्टरो की सलाह से अच्छे इलाज और जलवायु परिवर्तन के लिए उन्हे स्विट्जरलैंड ले जाया गया। इन्दिरा भी साथ गई। वहा वह शिक्षा पाने लगी।

जब जवाहरलाल भारत लौट आए तो इन्दिरा प्रियदर्शनी को पुन एक स्कूल मे दाखिल कर दिया गया, इसका नाम प्यूपिल्स ओन स्कूल था। महात्मा गाधी के कहने से नेहरू जी ने बालिका इन्दिरा को इसमे भर्ती कर दिया।

अब इन्दिरा जी बम्बई विश्वविद्यालय मे पढने लगी। सन् 1934 ई० मे उन्होने हाईस्कूल कर लिया।

अब पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने इन्दिरा के लिए यह सोचा कि वे अपनी बेटी को पढाने के लिए कालेज मे नही भेजेगे। वहा का वातावरण अच्छा नही होता। विद्यार्थी के दिमाग पर बोझ पडता है।

उन दिनो गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शाति निकेतन की चर्चा पूरे देश मे थी और यह कहा जा रहा था कि यह बहुत अच्छी सस्था है। यहा का वातावरण बिल्कुल शात है। यहा शिक्षा की सभ्यता के साथ साथ आचरण की सभ्यता भी सिखलाई जाती है। जो मनुष्य जीवन के लिए बहुत ही आवश्यक है।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने फैसला कर लिया कि वे इन्दिरा को पढाने के लिए शान्ति निकेतन भेजेंग।

इस तरह इन्दिरा जी शान्ति निकेतन मे आकर शिक्षा ग्रहण करने लगी।

कमला नेहरू बहुत दिनो से बीमार थी। उनका इलाज चल रहा था। मगर कोई भी फायदा नही होता। उनकी तन्दरुस्ती

दिन पर दिन गिरती चली जा रही थी। पण्डित जवाहरलाल नेहरू को इसकी बहुत बडी चिन्ता थी। वह हमेशा उदास बने रहते और सोचा करते कि कमला जी कैसे अच्छी होगी।

अब इन्दिरा जी को शान्ति निकेतन से बुला लिया गया, क्योंकि कमला जी उनके बिना नही रह सकती थी।

इलाज के लिए कमला जी को नेहरू जी यूरोप ले गए। साथ मे इन्दिरा जी को भी जाना पडा। उन्होने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे एडमीशन ले लिया। जब उन्हे छुट्टी मिलती। तो इग्लैण्ड से स्विटजरलैण्ड आ जाती। वहा आकर कमला नेहरू से मिलती।

कमला जी को बचाया नही जा सका। आखिर उनकी मृत्यु हो गई।

जब कमला नेहरू का इलाज चल रहा था तो स्विटजरलैण्ड मे एक पारसी युवक उनकी खूब सेवा करता, इसका नाम फिरोज था। लडका बहुत सुन्दर और होनहार था। कहना यह चाहिए कि हजारो मे एक था।

फिरोज एक नौ सेना अधिकारी का पुत्र था। उसकी मौसी इलाहाबाद मे रहती थी। वह एक समाज सेविका थी और एक मशहूर डाक्टर थी।

लदन मे इन्दिरा जी का परिचय फिरोज से हुआ। तब फिरोज लदन के स्कूल आफ इक्नामिक्स मे पढते थे। इन्दिरा जी के साथ वे भी लदन से कमला नेहरू को देखने के लिए स्विटजर लैण्ड आ जाते।

कमला नेहरू ने फिरोज को पसन्द कर लिया था। उन्होने नेहरू जी से अपने मन की बात कह भी दी कि वे फिरोज के साथ इन्दिरा का ब्याह करना चाहती हैं।

कमला नेहरू का निधन हो गया। तब इन्दिरा जी 19 साल

की थी। यह सन् 1936 ई० था।

सन् 1942 ई० मे इन्दिरा जी का व्याह 26 मार्च को फिरोज के साथ हो गया।

यह व्याह इलाहाबाद मे आनन्द भवन मे हुआ था। यह अतर्जातीय व्याह था इसका विरोध हुआ। किन्तु पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने इसकी कोई परवाह नही की।

9 अगस्त सन् 1942 ई० मे काग्रेस ने अपना भारत छोडो आन्दोलन चलाया था। 9 अगस्त को बम्बई मे कई बडे नेताओं को बन्दी बना लिया गया।

तब फिरोज गाधी भूमिगत थे। उन्होने अपने लिए यही ठीक समझा।

इन्दिरा जी गिरफ्तार कर ली गई। जनता उत्तेजित हो उठी। अब फिरोज गाधी से रहा नही गया। वे भी सबके सामने आ गए।

दम्पति साथ ही गिरिफ्तार हुए और एक जेल मे ही रखे गए।

भारत आजाद हो गया। पण्डित जवाहरलाल नेहरू प्रधान मन्त्री बन गए। इन्दिरा गाधी उनका सारा काम स्वय करती और न जाने कितने सामाजिक, राजनैतिक और बाल-सभाओ से भी घना सम्बन्ध था। सन् 1959 ई० मे उन्हे काग्रेस का अध्यक्ष बनाया गया। सन् 1960 ई० मे फिरोज गाधी का निधन हो गया। उन्हे दिल का दौरा पडा था। तब इन्दिरा जी केरल मे थी। उन्होने कलेजे पर पत्थर रख लिया और किसी तरह इस दुःख को सहा। बाप के सामने बेटी विधवा हो गई। इसका नेहरू जी को भी बहुत दुख था।

जब नेहरू जी की मृत्यु हो गई, तो इन्दिरा गाधी अपने को बिल्कुल अकेला समझने लगी। राजीव और सजय दोनो पुत्र ही

उनकी जिन्दगी के सहारे थे।

लाल बहादुर शास्त्री जब भारत के नए प्रधानमंत्री बने। तो उन्होंने अपने मंत्रीमण्डल में इन्दिरा गांधी को आमंत्रित किया। उन्हें सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय दिया गया। लेकिन यह देश का दुर्भाग्य था कि लाल बहादुर शास्त्री की थोड़े दिन बाद अचानक मृत्यु हो गई। तब 24 जनवरी सन् 1966 ई० में इन्दिरा गांधी को भारत की प्रधानमंत्री बनाया गया।

इसके बाद सन् 1967 ई० में हमारे देश भारतवर्ष में चौथा चुनाव हुआ। इसमें इन्दिरा जी की विजय हुई और वे फिर प्रधानमंत्री बनी।

सन् 1969 ई० में देश में एक नया विवाद खड़ा हो गया। गिरि को राष्ट्रपति बनाने की समस्या थी।

इन्दिरा जी ने इस मामले में अपनी बहुत बड़ी बुद्धिमानी का परिचय दिया और उन्होंने वी० वी० गिरि को भारत का राष्ट्रपति बनाया। यह उनका अदम्य साहस था।

इसके बाद इंदिरा जी ने अपना एक शक्तिशाली कदम और उठाया। उन्होंने देश को बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर डाला।

इसी साल 14 नवम्बर को जब पण्डित जवाहर लाल नेहरू का जन्म दिवस था। जिसे हम बाल दिवस कहते हैं और खूब धूमधाम से मनाते हैं उसी दिन हमारी प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने आनन्द भवन राष्ट्र को सौंप दिया।

प्रधानमंत्री भवन में तरह-तरह के मेहमान आते। इनके बोझ की व्यवस्था इन्दिरा गांधी ही करती थी उनके सामने रोज न जाने कितनी नई नई समस्याएं आती। जिनका वे अकेले ही साहस के साथ सामना करती।

सन् 1972 ई० में इन्दिरा गांधी को भारत रत्न की उपाधि मिली।

पजाब मे आतकवादियो का बोलबाला हो गया। अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर को सैनिकों का एक अड्डा बना दिया गया। इन्दिरा जी ने 6 जून सन् 1984 ई० मे इसको निणय कर लिया कि वे शातिपूर्वक इस समस्या का समाधान करेगी। खालिस्तान की माग हो रही थी। विदेशो मे रहने वाले सिक्ख खालिस्तान के पक्ष मे थे।

समस्या बहुत गम्भीर हो गई थी। इन्दिरा जी उसका समाधान खोज रही थी।

लेकिन तब तक 31 अक्टूबर सन् 1984 मे सवेरे के करीब नौ बजे थे। प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी अपने निवास से निकल कर थोडी ही दूर पर स्थित कार्यालय मे जा रही थी। तब तक उनके दो सुरक्षा कर्मियो ने उन पर गोलिया बरसा दी।

इन्दिरा गाधी की मृत्यु हो गई। वे मर कर भी जिन्दा हैं, वे अमर हैं और हमेशा अमर ही बनी रहेगी।

उनकी मौत पर देश ने एक मरण गीत गाया था। जो इस तरह था—"जब तक सूरज चाद रहेगा। इन्दिरा तेरा नाम रहेगा।"

इन्दिरा गाधी योग्य पिता की एक योग्य पुत्री थी। उनके पिता भारत के पहले प्रधानमन्त्री थे और वे देश की तीसरी प्रधानमन्त्री बनी। उन्होने अपना जीवन देशहित के लिए बलिदान कर दिया और आखिर शहीद हो गईं, वे प्रात स्मरणीय हैं। हम उन्हे कभी भुला नही पायेगे। उन्होने देश को एक सूत्र मे बाधने के लिए आदि से लेकर अन्त तक पूरा प्रयास किया। उन्हें सफलता भी मिली। इसमें कोई सदेह नही। बीस सूत्रीय कार्यक्रम इन्दिरा गाधी ने इसीलिए बनाया था। वह भारत को आदर्श बना देना चाहती थी यह उनका सुन्दर सपना था।

अब्दुल गफ्फार खां

अब्दुल गफ्फार खा का जन्म सन् 1890 ई० मे हुआ था। ये सीमा प्रात के एक गाव मे पैदा हुए थे। इसीलिए इन्हे सीमान्त गाधी कहा जाता है। इनके गाव का नाम उनमानजायी है। ये जमीदार सरदार बहराम खा के घर मे हुए थे। ये ज म जाति पठान थे। इनका नाम अब्दुल गफ्फार खा रखा गया।

इनके पिता बहराम खा निहायत ही ईमानदार आदमी थे। लोग उनके पास अपनी धरोहर रखते और उन पर पूरा यकीन रखते।

बहराम खा पखूतन जाति के पठान थे। उनके यहा पढाई को महत्व नही दिया जाता। मगर बहराम खा ने अब्दुल गफ्फार खा को पढने को बठा दिया। जब गफ्फार खा हाईस्कूल पास हो गए। तो उसी समय उनके बडे भाई डाक्टरी पढने के लिए इग्लैड गए। वह बम्बई मे डाक्टरी का कोस कर चुके थे।

अब्दुल गफ्फार खा को भी इग्लड भेजा जाने वाला था। लेकिन उनकी माता ने यह स्वीकार नही किया और उनकी यात्रा रोक दी गई।

वह सेना मे भर्ती होना चाहते थे। लेकिन वहा की हालत यह थी कि जमाना अग्रेजी का था। हिदुस्तानी सिपाहियो के साथ अच्छा व्यवहार नही किया जाता। गोरे सैनिको को उनसे अधिक वेतन मिलता। उन्हें सहूलियत भी खूब दी जाती और उनका सम्मान होता।

अब्दुल गफ्फार खा स्वाभिमानी युवक थे। वह यह सब सहन नही कर सकते थे। इसीलिए सेना मे भर्ती होने का विचार बदल दिया।

सन् 1912 ई० मे अब्दुल गफ्फार खा का ब्याह हो गया। वे एक साल बाद एक पुत्र के पिता भी बन गए।

इसी साल वे आगरा आए और मुस्लिम लीग के उत्सव मे भाग लिया। यही उनकी भेट मौलाना अब्दुल कलाम आजाद से हो गई। उन्होने उनका भाषण सुना। जिससे उन्हे प्रेरणा मिली।

अब्दुल गफ्फार खा समाज सेवा मे रुचि लेने लगे। उन्होने भी सकल्प ले लिया कि वे हिन्दुस्तान को अब गुलाम नही रहने देगे। उसकी आजादी के लिए अपना खून और पसीना एक कर देगे।

एक दिन अब्दुल गफ्फार खा को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। उनके लिए कहा गया कि वे राजनैतिक नेता है। देश की जनता को अग्रेजो के खिलाफ भडकाते हैं। इस तरह अब्दुल गफ्फार खा पहली बार जेल गए।

अब्दुल गफ्फार खा को जेल भेज दिया गया था। कुछ दिन बाद वह छूटकर आए। तो उनके पीछे ही फौज आ गई। इस सेना ने गाव को चारो ओर से घेर लिया। तोपे लगा दी गई थी। गाव वालो पर तीस हजार रुपये का जुर्माना किया गया था।

यह जुर्माना बेरहमी के साथ वसूल किया गया। तीस हजार लेना था और एक लाख लिया गया। बहुत से लोगो को बन्द भी कर दिया गया था।

इनमे बहराम खा और अब्दुल गफ्फार खा भी थे। ▪ महीने बाद ये दोनो जेल से छोडे गए।

कुछ दिन बाद एक बम काण्ड मे वे फिर पकड लिए गए।

इस तरह अब्दुल गफ्फार खां देश की आजादी के लिए आगे बढ़ते ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया जाता। मगर वे तनिक भी विचलित नहीं होते। साहस से काम लेते।

अब्दुल गफ्फार खां ने अपनी एक शादी और की। यह उनका दूसरा ब्याह था और इसे उन्होंने अपने पिता से आज्ञा लेकर किया था।

मुसलमानों में चार ब्याह करने का विधान है।

सन् 1920 ई० में 18 हजार पठान अब्दुल गफ्फार खां के साथ तुर्की के लिए विदा हो गए। वे काबुल के रास्ते से तुर्की पहुंचना चाहते थे।

इसे हिजरत कहकर पुकारा गया। इसके सरदार बहराम खां थे। तब वे 90 वर्ष के थे। लेकिन उनमें असीम साहस था।

आखिर यह दल लौट आया। काबुल के बादशाह ने इन पठानों को समझाया और वापस लौटा दिया।

इसी साल नागपुर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। महात्मा गांधी का परिचय अब्दुल गफ्फार से हुआ। वे उन्हें देखकर बहुत खुश हुए।

इस नागपुर अधिवेशन में अब्दुल गफ्फार खां महात्मा गांधी से बहुत अधिक प्रभावित हुए। वह उनके अहिंसा व्रत को देखकर उनके आन्दोलन की तारीफ करने लगे। इस अधिवेशन में स्वराज्य की मांग का प्रस्ताव रखा गया। तब मिस्टर जिन्ना भी भारतीय कांग्रेस में थे और वे स्वराज्य की मांग कर रहे थे।

अब्दुल गफ्फार खां जब अधिवेशन से लौटकर आए। तो उन्होंने एक हाईस्कूल खोला और उसका नाम आजाद हाई स्कूल रखा। इसके लिए कहा जाता है कि उनकी यह संस्था राजनैतिक नहीं थी। यह गैर राजनैतिक और विशुद्ध थी।

गोरी सरकार ने सरदार बहराम खां को बुलाया। उनसे

कहा कि वे अपने लडके अब्दुल गफ्फार खा को समझा दे कि वह घर पर बैठे। हर गाव का दौरा न करे। पठानो को शिक्षा नही दी जाती। यह बहुत पुरानी बात है। उसने जगह-जगह पर स्कूल खोल रखे हैं, पठानो के साथ यह बहुत बडा अन्याय है। उनका कानून कहता है कि पठानो के बच्चो को शिक्षा नही देनी चाहिए।

अग्रेजो ने बहराम खा को यह भी समझाया कि पठानो को शिक्षा देना एक गुनाह है। उनके इस्लाम धर्म मे यह बिल्कुल मना है।

सरकार की नीति यह थी कि आपस मे फूट डालो और राज्य करो। अपनी इसी कूटनीति के कारण वे भारत पर शासन कर रहे थे। ये गोरे फिरगी अग्रेज हमेशा अपना स्वार्थ देखते। आपस मे फूट डालकर लडाई करवाते और फिर दूर से तमाशा देखते। उससे पूरा फायदा उठाते। यह उनकी बहुत गहरी चाल थी और उसमे कामयाब होकर रहते।

अग्रेज अच्छी तरह जानते थे कि अब्दुल गफ्फार खा अपने पिता की बात नही मानेंगे। इस तरह दोनो मे झगडा हो जाएगा और वे उसका फायदा उठायेंगे।

मगर ऐसा नही हुआ। अब्दुल गफ्फार खा ने अपने पिता को शातिपूर्वक समझा दिया। उनका कहना था कि पठानो को शिक्षा देना अपराध नही एक बहुत बडा पुण्य है। जिस तरह नमाज पढना हमारे लिए जरूरी है। ठीक वैसे ही हमे तालीम भी हासिल करनी चाहिए। जिसे शिक्षा कहते हैं और जिसका दूसरा नाम ईशिक्षा है।

अग्रेजो की चाल बेकार गई। वे अब्दुल गफ्फार खा पर खिसियाकर रह गए। वह गिरफ्तार कर लिए गए। 17 दिसम्बर सन 1921 ई० मे वह बन्दी बनाए गए थे। उन पर आरोप लगाया गया था कि उन्होने कानून का उल्लघन किया है। सीमान्त प्रान्त

अपराध नियम की धारा को उन्होने तोडा है। यह धारा चालीस थी। इसीलिए उन्हे तीन साल की सजा हुई और यह कठोर कारावास का दण्ड था।

जेल मे अब्दुल गफ्फार खा लाला लाजपतराय से मिले। अन्य नेताओ से भी उनकी मुलाकात हुई। जो कांग्रेस के बडे नेता थे।

सन् 1926 ई० मे अब्दुल गफ्फार खा के पिता की मृत्यु हो गई। यहा पर गफ्फार खा ने अपने बडे भाई से कहा कि मातम पुर्सी मे बेकार के लिए पैसा खर्च नही किया जाएगा। उसमे जितनी भी रकम खर्च करनी है उसे पख्तून बच्चो की तालीम के लिए दिया जाए। यही हुआ। बिरादरी के लोग अब्दुल गफ्फार खा का विरोध करते रहे लेकिन उन्होने इसकी तनिक भी परवाह नही की।

अब्दुल गफ्फार खा हज करने गए। उन्होने मुसलमान देशो का भ्रमण किया। वे यरुसलम भी पहुचे। उन्होने मुसलिम देशो का अध्ययन किया और वहा की स्थिति को अच्छी तरह समझा। उनमे प्रेरणा जागी और उनका मन कहने लगा कि वह भारत को आजाद कराकर मानेगे। अग्रेज फरेबी और मक्कार हैं। वे भारत की जनता के साथ अच्छा व्यवहार नही करते, उसे अपना गुलाम बना रखा है।

इसी हज यात्रा के मार्ग मे उनकी पत्नी का निधन हो गया। वह बहन के साथ लौट आए। जो पत्नी और बहन के साथ हज करने गए थे।

सन् 1924 ई० से लेकर सन् 1929 ई० तक का समय ऐसा था कि अग्रेजो को अपनी चाल मे सफलता मिल गई। उन्होने हिन्दू और मुसलमान दोनो को आपस मे लडा दिया।

हिन्दुस्तान मे जगह-जगह साम्प्रदायिक दगे होने लगे।

अब्दुल गफ्फार खा भी इस नई आग को बुझाने के लिए पूरी-पूरी कोशिश करने लगे।

सन् 1929 ई० मे अब्दुल गफ्फार खा ने एक नयी सस्था खोली। यह सस्था गैर राजनैतिक थी। यह स्वय सेवी थी। इसका नाम खुदाई खिदमतगार था।

इन खुदाई खिदमतगारो को लाल कमीजें पहनाई जाती। उन्हे लाल कुर्ती कहा जाता। यह एक सेना बन गई और अब्दुल गफ्फार खा को इसका सेनापति बनाया गया।

छ महीने मे ही इस सस्था मे पचास हजार सदस्य हो गए।

सन् 1930 ई० मे वे पेशावर जा रहे थे, लेकिन वहा पहुचने के पहले ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। अब लोग उन्हें अब्दुल गफ्फार खा बहुत कम कहते। उन्हें बादशाह खान कहकर पुकारा जाता। उन्हे सीमान्त गाधी भी कहा जाता।

गाधी जी का इरविन से समझौता हो गया था। इसीलिए सभी नेता जेलो से छोड दिए गए। बादशाह खान भी छूटकर आ गए। वे छ साल बाद छूटे थे। जब अपने प्रात मे पहुचे तो उनका स्वागत किया गया। वे हमेशा एक सिपाही की तरह रहते। वे सफर मे भी जब जाते, तो अपने साथ सामान कम से कम ले जाते। उनके साथ एक गठरी होती, जिसे पोटली भी कह सकते हैं। उसमे उनका कुर्ता सलवार रहता। एक चादर, एक तौलिया भी होती।

अब्दुल गफ्फार खा को बागवानी का चाव था। वे पौधे और पेड लगाने के शौकीन थे।

नेहरू जी पेशावर से अब्दुल गफ्फार खा के साथ सरदारयाब जा रहे थे। पहाडी रास्ता था। अधिकारी एव स्वयसेवक पैदल चल रहे थे। उन पर पत्थरो की बरसात होने लगी। यह इलाका ऐसा ही था। तब अब्दुल गफ्फार ने नेहरू जी को अपनी बाहो

मे छिपा लिया।

भारत आजाद हुआ। देश का बटवारा हो गया। लेकिन अब्दुल गफ्फार खा को यह बिलकुल पसद नही था। वे नही चाहते थे कि उनके देश के दो टुकडे हो। उनका हृदय विदीण होकर रह गया।

सन् 1948 ई० मे 15 जून को पाकिस्तान सरकार ने उन्हे बन्दी बना लिया। उन पर अभियोग लगाया गया था कि वे राजद्रोही हैं।

इसके बाद अब्दुल गफ्फार खा को सन् 1956 ई० मे फिर गिरफ्तार किया। जितने भी खुदाई खिदमतगार थे, वे जेल मे पहुचा दिए गए।

जेलखाने मे सीमान्त गाधी का स्वास्थ्य खराब हो गया। उनके दातो मे पायरिया था। सब दात निकाल दिए गए। उन्हे जेल से छोड दिया गया। मगर शर्त यह थी कि वे पजाब को छोडकर कही बाहर नही जायेगे। सीमा प्रान्त मे प्रवेश की आज्ञा हटा दी गयी। बादशाह खान अपने घर पहुचे। वहा उनका भरपूर स्वागत हुआ। वे बलोचिस्तान चले गए। तब उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और चौदह साल की सजा हुई।

जनरल अयूब ने सजा पूरी होने से पहले ही बादशाह खान को जेल से छोड दिया।

अब्दुल गफ्फार खा की तन्दरुस्ती दिन पर दिन गिरती जा रही थी। इलाज चल रहा था, लेकिन कोई फायदा नही होता। वे जेल मे बार बार बन्द किए जाते और जल्दी ही इसलिए छोड दिए जाते क्योकि उनका स्वास्थ्य साथ नही दे रहा था। पाकिस्तान सरकार को डर था कि कही जेल मे ही उनकी मृत्यु न हो जाए।

बादशाह खान को जवाहरलाल नेहरू पुरस्कार दिया

गया। एक साल बाद वे फिर भारत आए। तब उनकी तन्दरुस्ती बहुत खराब हो गई थी। उन्हे बम्बई के अस्पताल मे भर्ती कर दिया गया और उनका इलाज होने लगा।

फिर वे इलाज के लिए दिल्ली लाए गए। लेकिन उनकी हालत मे कोई सुधार नही हुआ।

भारत ने सन् 1987 ई० मे बादशाह खान को भारतरत्न की उपाधि दी। यह चौदह अगस्त का दिन था, जब उन्हें भारत रत्न से अलकृत किया गया।

तब अब्दुल गफ्फार खा बीमारी की हालत में अस्पताल में थे। उनके पुत्र वली खा ने यह अलकरण लिया।

बादशाह खान को एक खास हवाई जहाज से पेशावर भेजा गया। उनके साथ भारत के कई मत्री और डाक्टरो का एक दल गया। वहा उन्हे अस्पताल मे दाखिल कर दिया गया। इस अस्पताल का नाम लेडी रिडीन हास्पिटल था।

अब्दुल गफ्फार खा छ महीने तक बेहोश रहे। आखिर उनकी मृत्यु हो गई। 20 जनवरी सन् 1988 ई० मे वे इस ससार को छोड गए।

उनकी आखिरी इच्छा थी कि उन्हे जलालाबाद मे ले जाकर दफन किया जाए। वही किया गया। आज बादशाह खान हमारे बीच मे नही है, लेकिन उनका अभाव हमे पूरी तरह खल रहा है।

कुमार स्वामी कामराज

कामराज का जन्म सन् 1903 ई० मे पद्रह जुलाई को हुआ था। ये एक मुखिया परिवार मे हुए थे और इनके गाव का नाम विरुद्ध पट्टी था।

कामराज का नाम कुमार स्वामी कामराज रखा गया। जिस दिन वे पढने के लिए गए तो नये कपडे पहने थे और घर मे खूब धूमधाम मनाई गई।

कुछ दिन बाद कामराज के पिता का स्वर्गवास हो गया। उनकी दादी का नाम पार्वती अम्मल था और मा का शिवकामी। दोनो ने हिम्मत नही हारी और पूरे साहस से काम लिया। उन दोनो ने अपने सब गहने बेच डाले और एक साहूकार के पास उसका रुपया जमा कर दिया। उनका मतलब यह था कि रुपये का जो व्याज आएगा, उसी मे परिवार के तीनो सदस्य अपना गुजारा करेगे। कामराज की पढाई भी चलती रहेगी और उसमे कोई बाधा नही पडेगी। रुपया जमा का जमा रहेगा और उनका ब्याज आता रहेगा।

यह क्रम चलने लगा। कामराज बडे होने लगे। एक बार उन्होने एक बिगडे हुए हाथी को सहज ही काबू मे कर लिया था।

दक्षिण भारत मे गणेश चतुर्थी का त्यौहार बडी धूमधाम से मनाया जाता है। कामराज के घर मे भी यह त्यौहार मनाया जाता है। उनके स्कूल मे भी यह पर्व हसी खुशी सम्पन्न होता।

जब कामराज तेरह साल के थे, तो उन्होने डाक्टर ऐनी-

बेसेंट के होम रूल की चर्चा सुनी। वे देश की आजादी के लिए व्याकुल हो गए।

अब कामराज का मन समाज सेवा की ओर अग्रसर होने लगा था। पंजाब में जब जलिया वाला हत्याकांड हुआ, तो उन पर उसका बहुत गहरा असर पड़ा। वे विचलित हो उठे।

उन दिनों दक्षिण भारत में अछूतों का जीना मुश्किल हो रहा था। लोग हरिजनों की छाया भी अपने ऊपर पड़ने नहीं देते।

महात्मा गांधी का सत्याग्रह आंदोलन चल रहा था। अछूतों को वे हरिजन कहते और उन्हें उनके अधिकार दिलाने के लिए पूरी कोशिश कर रहे थे।

कामराज ने भी इस सत्याग्रह में भाग लिया। वे नागपुर के झण्डा सत्याग्रह में शामिल हुए। मद्रास में जब कर्नल नील की मूर्ति हटाई गई, तो वे सबसे आगे थे।

अब कामराज को कांग्रेस कमेटी का सदस्य बना लिया गया। वे अखिल भारतीय कांग्रेस के मेम्बर बन गये। इस समय उनकी अवस्था केवल 28 साल की थी।

तमिलनाडु हमेशा से दो दलों में बंटा रहा है। इसमें एक दल तो ब्राह्मणों का है और दूसरा उन लोगों का जो ब्राह्मण नहीं हैं।

इसी तरह वहां की कांग्रेस में भी दो दल बन गए। एक दल राजगोपालाचार्य का था और दूसरा सत्यमूर्ति जी का।

कामराज सत्यमूर्ति की कांग्रेस में शामिल हो गए। वे केवल तमिल भाषा जानते थे। यह राजनीति का क्षेत्र था। इसमें अंग्रेजी भाषा का ज्ञान होना बहुत जरूरी था।

यही कारण था कि कामराज अंग्रेजी पढ़ने लगे।

सन् 1937 ई० में कामराज को अपने ही क्षेत्र से नेता चुन लिया गया। तब कांग्रेस में ऐसा था कि सत्याग्रह के लिए महात्मा गांधी के पास जाकर उनसे आज्ञा लेनी पड़ती थी।

कामराज वर्धा की ओर चल दिए, जहा गाधी जी का आश्रम था। उन्हे रास्ते मे ही गिरफ्तार कर लिया गया और वे बिल्हौर जेल मे वद कर दिए गए। इस तरह वे तीसरी वार गिरफ्तार हुए थे। इससे पहले दो वार जेल जा चुके थे और छूटकर आ गए।

सन् 1942 ई० मे बम्बई मे काग्रेस का महा अधिवेशन हुआ। यह अधिवेशन आठ अगस्त को हुआ था। तब कामराज वहा मौजूद थे। वे प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष थे। वे मद्रास जा रहे थे। पुलिस उनकी राह देख रही थी कि आते ही उन्हे गिरफ्तार कर लिया जायेगा। लेकिन वे मद्रास नही गए। बीच मे ही एक छोटे-से स्टेशन पर उतर गए।

वहा जाकर कामराज अपने एक साथी कार्यकर्ता से मिले। उसका नाम कल्याण रामा था। वह अय्यर था। दोनों मिलकर आदोलन की तैयारी करने लगे।

फिर कामराज अपने गाव आए। दूसरे ही दिन थाने पहुच गए और अपने को गिरफ्तार करवा दिया। इससे यह पता चलता है कि वे कितने ईमानदार आदमी थे। वे कभी झूठ नही बोले और सच्चाई से उन्होने कभी इन्कार नही किया।

सत्यमूर्ति का कामराज को सबसे बडा सहारा था। लेकिन उनकी मृत्यु सन् 1943 ई० मे हो गई। तब कामराज जेल मे थे। वे पूरे दो साल बाद छूटे।

राजगोपालाचार्य से कामराज के विचार नही मिलते थे। इसीलिए दोनो नेताओ मे परस्पर मतभेद रहता।

कामराज ने पार्लियामेंट से इस्तीफा दे दिया।

अब कामराज तमिलनाडु के मुख्यमंत्री बन गए। उनका कहना था कि मत्रिमण्डल छोटे से छोटा होना चाहिए। यही कारण था कि उन्होंने अपने मत्रिमण्डल मे कम से कम मत्री रखे।

दफ्तरो मे जो लाल फीताशाही फैल रही थी, उसे दूर किया। वे छोटे से छोटे आदमी से भी मिलते और उसकी बात सुनते। वहा के स्कूलो मे शिक्षा अनिवार्य हो गई। छुआछूत को दूर किया जाने लगा। नव वर्ष तक कामराज मुख्यमन्त्री रहे। इसके बाद वे काग्रेस के अध्यक्ष बना दिए गए। पण्डित जवाहरलाल नेहरू कामराज से बहुत प्रसन्न थे और उन पर पूरा विश्वास करते थे।

कामराज मे यह विशेषता थी कि वे योजना पर योजना बनाते और अपना प्रस्ताव जब सामने रख देते तो सब चौक जाते।

पण्डित नेहरू कामराज की योजनाओ को कामराज प्लान कहते।

नेहरू जी भी भगवान को प्यारे हो गए। लालबहादुर शास्त्री भारत के दूसरे प्रधानमन्त्री बने। लेकिन उन्नीस महीने के बाद उनका भी निधन हो गया।

अब इन्दिरा गाधी प्रधानमन्त्री बन गई थी और काग्रेस के अध्यक्ष निजलिगप्पा बने।

काजराज पुरानी काग्रेस मे आ गए, क्योकि अब काग्रेस दो भागो मे बट गई थी।

सन् 1975 ई० मे कामराज की मृत्यु हो गई। यह महीना अक्टूबर का था और तारीख 2 थी।

वे अधिक दिन तक बीमार नही रहे। मृत्यु के बाद हमारे देश भारत मे उन्हे भारतरत्न की उपाधि प्रदान की। यह भारत-रत्न का अलकरण उनकी बहन को दिया गया। वे एक याद बनकर रह गये और हम उन्हे कभी नही भूलेंगे।

लालबहादुर शास्त्री

लालबहादुर शास्त्री भारत के दूसरे प्रधानमंत्री थे। इन्हें सन् 1966 ई० में भारतरत्न की उपाधि दी गई। यह अलंकरण उन्हें मृत्यु के बाद मिला।

लालबहादुर शास्त्री का जन्म सन् 1904 ई० में अक्टूबर के महीने में हुआ। यह 2 अक्टूबर की तारीख थी। जिस दिन गांधी जी का जन्म-दिवस था, उसी पावन तिथि में हमारे शास्त्री जी ने मुगलसराय में जन्म लिया। शास्त्री जी के पिता का नाम शारदाप्रसाद श्रीवास्तव था।

वे गरीब तो नहीं, लेकिन साधारण श्रेणी के व्यक्ति थे। कायस्थ होने के नाते वे स्कूल में पढ़ाने लगे। फिर इन्कमटैक्स दफ्तर में एक क्लर्क बन गए।

यह शास्त्रीजी का दुर्भाग्य था कि उनके पिता, जब वे लगभग दो साल के थे, तभी मृत्यु को प्राप्त हो गए।

शास्त्री जी की माता का नाम रामदुलारी था। वे शिशु को लेकर मैके चली गईं। इनके नाना हजारीलाल थे। उन्होंने कक्षा छः तक इन्हें पढ़ाया। फिर शिक्षा के लिए उन्हें बनारस भेजा गया और वहीं से उन्होंने हाईस्कूल पास किया।

बनारस में वे अपने मौसा के घर में रहते थे। उनका नाम रघुनाथप्रसाद था। वे म्युनिसिपैलिटी में क्लर्क थे। कहने के लिए तो वे हेडक्लर्क थे, लेकिन उनकी तनख्वाह बहुत कम थी। खर्च कठिनाई से चलता। वे संयम-नियम से रहते, जिसका प्रभाव

शास्त्री जी पर बहुत गहरा पड़ा।

लालबहादुर एक योग्य विद्यार्थी थे। उनका मन पढ़ने में खूब लगता। वे सहपाठियों के प्यारे थे और शिक्षकों के दुलारे। इन्हें जो भी देखता, वह यही कहता कि यह लड़का बहुत ही होनहार है।

बात सच्ची थी। लालबहादुर की अंग्रेजी बहुत अच्छी थी, गणित कुछ कमजोर था और इतिहास उन्हें बहुत जल्दी याद हो जाता।

इसी बीच में बाल गंगाधर तिलक आए। तब शास्त्री जी बनारस से लगभग पचास मील की दूरी पर रहते थे। वे किसी तरह बनारस पहुंचे। गंगाधर तिलक का भाषण सुना। सन् 1919 ई० में उनकी भेंट गांधी जी से हुई।

शास्त्री जी को याद हो गया था कि स्वतन्त्रता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। यह बात गंगाधर तिलक की थी। यह उन्हीं का महामन्त्र था।

शास्त्री जी पढ़ते रहे। उन्हें मन का मरट हमेशा बना रहता।

डॉ० भगवानदास ने लालबहादुर शास्त्री को सलाह दी कि वे काशी विद्यापीठ में दाखिला ले लें। वहां के प्रिंसिपल भगवानदास थे। वे डी० लिट० थे। ऐसे ही वहां के शिक्षक आचार्य कृपलानी डॉ० सम्पूर्णानन्द और नरेन्द्र देव आदि थे।

वे घर से पैदल विद्यापीठ जाते। वे चार साल तक पढ़ते रहे। फिर इसके बाद समाज-सेवा में लग गए। उनके सहपाठी अलगू राय शास्त्री थे। दोनों मिलकर अछूतों का उद्धार करने लगे।

लाला लाजपतराय से जब शास्त्री जी की भेंट हुई, तो वे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने लोक सेवक मण्डल का उन्हें - बना दिया। इसके बाद लाजपतराय की मृत्यु हो गई।

जी इलाहाबाद चले आए।

लालबहादुर शास्त्री का व्याह सन् 1927 ई० मे हुआ था। तब वे 23 साल के थे। श्रीमती ललिता शास्त्री उनसे छ वर्ष छोटी थी।

सन् 1930 ई० से लालबहादुर शास्त्री पूरी तरह समाज-सेवी बन गए। वे काग्रेस मे काय करने लगे और लोकप्रिय बन गए।

सन् 1930 ई० मे लालबहादुर शास्त्री जिला काग्रेस के मन्त्री बने।

लालबहादुर शास्त्री की जवाहरलाल नेहरू से गहरी मित्रता थी। वे आनन्द भवन रोज जाते थे। पण्डित मोतीलाल नेहरू भी इन्हें बहुत स्नेह करते थे।

एक बार लालबहादुर शास्त्री नैनी जेल मे थे, तभी उनकी बेटी बीमार पड गई। घर मे इन्हे बुलाया गया। जेलर ने कहा कि तुम्हे एक शत पर छोडा जा सकता है कि तुम सत्याग्रह नहीं करोगे और किसी भी आन्दोलन मे हिस्सा नही लोगे।

शास्त्री जी ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नही किया। अन्त मे जेल अधिकारियो ने उन्हे छोड दिया। लेकिन जब वे घर पहुचे तो उनकी बेटी की मृत्यु हो गई थी।

ऐसी ही घटना एक बार और हुई। तब भी वे जेल मे थे और उनका पुत्र बीमार हो गया।

अब शास्त्री जी ने इलाहाबाद छोड दिया और वे लखनऊ मे रहने लगे। वे काग्रस के नेता थे। विधान सभा मे पहुच गए और भूमि-सुधार का काम करने लगे।

सन् 1942 ई० की क्रान्ति ऐसी थी, जैसा सन् 1857 ई० मे स्वतन्त्रता सग्राम हुआ था। 8 अगस्त को गाधी जी का नारा बम्बई मे बुलन्द होने लगा। जनता सडको पर आ गई। वह नारा

वुलन्द करने लगी—"अंग्रेजो भारत छोडो। स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम स्वराज लेकर ही रहेंगे।"

शास्त्री जी बम्बई से किसी तरह इलाहाबाद आ गए। उन्हें पता चला कि इलाहाबाद स्टेशन पर उतरते ही उनको गिरफ्तार कर लिया जाएगा। इसीलिए वे नैनी स्टेशन पर उतर गए और भूमिगत बन गए।

शास्त्री जी इलाहाबाद मे भाषण दे रहे थे। ऐसे ही समय मे उन्हें बंदी बना लिया गया।

सन् 1947 ई० मे भारत आजाद हो गया। पण्डित गोविन्द वल्लभ पंत ने लालबहादुर शास्त्री को पुलिस विभाग सौप दिया। साथ ही साथ उन्हें यातायात मंत्री का भी पद दिया।

इन दोनो विभागो मे शास्त्री जी ने बहुत सुधार किया।

इसके बाद लालबहादुर शास्त्री रेलमंत्री बनाये गये।

जब आन्ध्र प्रदेश के महबूब नगर मे भीषण रेल-दुर्घटना हुई, उन्होंने सारा भार अपने सिर पर ओढ लिया और त्याग-पत्र दे दिया।

फिर लालबहादुर शास्त्री को उद्योग मंत्री बनाया गया। वाणिज्य का विभाग भी उन्हे सौप दिया गया। तभी से उन्हें हृदय-रोग हो गया था और पहली बार दिल का दौरा पडा।

समय आगे बढा। लालबहादुर शास्त्री हमारे देश के गृह-मंत्री बन गए। उन्होंने इस क्षेत्र मे कई सुधार किए।

इसी बीच मे भुवनेश्वर मे कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। तब शास्त्री जी नेहरू जी के पक्के सहयोगी बन गए।

फिर जब लालबहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने तो उन्होंने राष्ट्रपति मार्शल टीटो से भेंट की। तब वे यूगोस्लाविया की यात्रा पर गए थे।

इसके बाद शास्त्री जी काहिरा गए। यह मिस्र देश की राज-

धानी है। यहा के राष्ट्रपति नासिर खा थे।

शास्त्री जी को वहा राजकीय भोज दिया गया। यह मासाहारी था, जबकि शास्त्री जी पूरी तरह शाकाहारी थे। कहा जाता है कि भोज के बाद उन्होंने अपने लिए खाना स्वय बनाया था।

लालबहादुर शास्त्री ने काहिरा मे रहकर पाच-सूत्री कार्यक्रम बनाया। यह विश्व-शान्ति के लिए था और इसका खूब प्रचार हुआ।

वे कराची आए और अयूब खा से मिले। तब पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खा थे।

शास्त्री जी ने नेपाल की भी यात्रा की थी। वे रूस गए और इसके बाद फिर कनाडा पहुचे।

हमारे शास्त्री जी लदन गए। जब शास्त्री जी नेपाल मे थे, तभी पाकिस्तानी सेनाओ ने भारत पर हमला कर दिया। दोनो देशो मे युद्ध होने लगा। आखिर समझौता हुआ। यह समझौता 30 जून सन् 1965 ई० मे हुआ था। इसमे यह कहा गया था कि पाकिस्तान ने जितनी जमीन भारत की ले ली है वह वापस कर दे। इसके बाद दोनो देश एक दूसरे पर आक्रमण नही करेंगे।

शास्त्रीजी का प्रिय नारा था—"जय जवान, जय किसान।"

पाकिस्तान ने युद्ध के समझौते को भग कर दिया। उसका हमारे देश पर फिर हमला हुआ। तब शास्त्री जी ने इसका मुहतोड जवाब दिया। पाकिस्तान के हाजीपीर पर हमारा तिरगा झण्डा फहराने लगा।

रूस बीच मे आ गया। वह दोनो देशो मे सधि करवाना चाहता था। 14 सितम्बर को लडाई बन्द हो गई। पाकिस्तान से अयूब खा और हमारे देश से शास्त्री जी सधि की बातें

करने के लिए रूस के ताशकद मे पहुचे।

सधि हो गई। शास्त्री जी भारत लौटने वाले थे। उन्होने सोचा कि रास्ते मे काबुल पडेगा, वे अब्दुल गफ्फार खा से भी भेंट कर लें।

लेकिन तब तक वज्रपात हो गया। शास्त्री जी की हृदय-गति रुक गई और उनका देहान्त हो गया। हमारे शास्त्री जी दुनिया से नाता तोड गए। वे विजय घाट की धरती मे समा गए। वही उनकी समाधि है, जिसे विजय घाट कहते हैं।

शास्त्री जी की यह विजय घाट की समाधि ऐतिहासिक लाल-किले के पीछे है। ठीक इसके पास है शान्ति वन, जहा पण्डित जवाहरलाल नेहरू की समाधि है।

शास्त्री जी को मरने के बाद भारतरत्न की उपाधि दी गयी। वे साधारण व्यक्ति लगते थे। उनका लिबास सादा था, और भोजन भी सादगीपूण। देखने वाला कोई भी यह नही कह सकता था कि ये भारत के प्रधानमन्त्री हैं। वे भारत के सूरज थे। अपना प्रकाश फैलाकर चले गए। वे नई रोशनी दे गए हैं, जो हमारे आगे की राह आसान करती रहेगी। हम उन्हें कभी भूल नही पायेंगे। वे हमारे लिए प्रात स्मरणीय है। उनका जीवन-चरित्र ऐसा है कि हम उससे प्रेरणा प्राप्त करते रहेगे। वे देश का आदश थे। वे सबके लिए एक उदाहरण थे। यही कारण है कि उन्हें कभी नही भुलाया जा सकता।

डॉक्टर जाकिर हुसैन

डॉक्टर जाकिर हुसैन का जन्म सन् 1897 ई० मे हुआ था। यह फरवरी का महीना था और 8 तारीख थी।

यह हैदराबाद दक्षिण मे पैदा हुए थे। इनके पिता का नाम फिदा हुसैन खा था। वे जाति के पठान थे। वे बहुत बडे वकील थे और हैदराबाद मे वकालत करते थे।

जाकिर हुसैन शिक्षा घर पर हुई। जब वे नौ साल के थे, तभी उनके पिता का निधन हो गया। अब वे हैदराबाद से कायमगज आ गए। उनकी पढाई का बोझ उनकी माता के सिर पर पड गया। वे सीधी और धर्मपरायण महिला थी। यही कारण था कि उन्होने अपने पुत्र को एक सच्चा मुसलमान बनाना चाहा।

शुरू की पढाई के बाद जाकिर हुसैन का नाम इटावा के एक हाई स्कूल मे लिखवाया गया। इसका नाम इस्लामिया हाई-स्कूल था। यही से उन्हे अखबार पढने की आदत पड गई। वह अलहिलाल तथा कामरेड अखबार खूब रुचि से पढने लगे।

सन् 1911 ई० मे भारत मे प्लेग की महामारी फैली। इसमे जाकिर हुसैन के परिवार मे कोई भी नही बचा।

सोलह साल की उम्र मे जाकिर हुसैन ने हाई स्कूल कर लिया। जब वे अट्ठारह साल के हुए तो वे अलीगढ आ गए। वहा मोहमड्डन एग्लो ओरियटल कालेज मे पढने लगे।

जाकिर हुसैन का व्याह हो गया। उनकी बेगम दस साल की थी और उनका नाम शाह बानू बेगम था।

सन् 1918 ई० मे जाकिर हुसैन ने बी० ए० कर लिया। इसके बाद कानून पढना शुरू कर दिया और अर्थशास्त्र मे एम० ए० किया।

ऐसे समय मे गाधी जी का असहयोग आदोलन चल रहा था। देश की पूरी जनता महात्मा गाधी के साथ थी। वे अलीगढ आए और उनके भाषण का गहरा प्रभाव जाकिर हुसैन पर पडा।

जाकिर हुसैन ने एक विद्यालय खोला, जिसका नाम जामिया मिल्लिया इस्लामिया था। ये राष्ट्रवादी सस्था थी। इसमे हकीम मजमल खा ने पूरा सहयोग दिया। जाकिर हुसैन अर्थशास्त्र पढाते थे।

सन् 1922 ई०मे जाकिर हुसैन इग्लड जाना चाहते थे, लेकिन वे इग्लैण्ड इसलिए नही गये, क्योकि उन दिनो इग्लैण्ड जाने का एक रिवाज बन गया था। इसीलिए जाकिर हुसैन इग्लैण्ड न जाकर जमनी गए। वहा उनकी भेट हाबिद हुसैन और मुजीब से हुई। ये दोनो प्रोफेसर थे। इन्होने वायदा किया कि वे भारत मे रह कर जामिया मिल्लिया मे पढायेंगे।

तब जामिया मिल्लिया आर्थिक सकट से गुजर रहा था। ऐसा लग रहा था कि पैसे के कारण बन्द न हो जाए। ऐसे ही समय मे हकीम मजमल खा और डा० अन्सारी यूरोप आए। जाकिर हुसैन उनसे मिले और उन्ह जामिया मिल्लिया का हाल बतलाया।

तब जामिया मिल्लिया को अलीगढ से दिल्ली लाया गया।

सन् 1926 ई० मे बलिग विश्वविद्यालय से जाकिर हुसैन ने पी-एच० डी० की उपाधि पाई। वे आबिद हुसैन और मजीत के साथ भारत आ गए। जामिया मिल्लिया की हालत देखकर

उन्हे बहुत दुख हुआ।

सन् 1935 ई० मे जामिया मिल्लिया को देहली के करौल बाग से ओखला पहुचा दिया गया।

सन् 1937 ई० मे वरधा मे एक अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन हुआ। जाकिर हुसैन ने भी उसमे भाग लिया। उन्हें जामिया मिल्लिया की सबसे बडी चिंता थी। उन्ही दिनो दूसरा विश्व महायुद्ध आरम्भ हो गया।

देश का बटवारा हो गया। न जाने कितने मुसलमान पाकिस्तान चले गए। खून खराबा हुआ। ऐसे मे जामिया मिल्लिया की हालत बहुत खराब हो गई।

अलीगढ का मुस्लिम विश्वविद्यालय भी पतन की ओर पहुच गया। पण्डित जवाहरलाल नेहरू तथा मौलाना आजाद ने डाक्टर जाकिर हुसैन को अलीगढ यूनिवर्सिटी का उपकुलपति बना दिया।

सन् 1952 ई० मे डाक्टर जाकिर हुसैन राज्य सभा के अध्यक्ष बन गए।

सन् 1957 ई० मे वे बिहार के गवनर बना दिए गए। उन्होने बिहार विश्वविद्यालय मे भी बहुत परिवर्तन किया।

सन् 1962 ई० मे वे भारत के उपराष्ट्रपति बन गए। इसके बाद सन् 1967 ई० मे वे भारत के राष्ट्रपति बन गए।

डा० जाकिर हुसैन ने बहुत-सी पुस्तकें लिखी, जो अत्यधिक लोकप्रिय हैं। उन्होने इगलिश की एक किताब का उर्दू मे अनुवाद भी किया। इस किताब का नाम 'प्लेटो के रिपब्लिक' था।

इसके बाद ही डा० जाकिर हुसैन ने प्रोफेसर केनन की एक किताब का उर्दू अनुवाद किया। उर्दू मे इस पुस्तक का नाम उन्होने 'महादिए मशियत' रखा। इगलिश मे इसका नाम 'एलिमेण्टरी पोलेटिकल इकानामी' था।

जाकिर हुसैन ने फ्रेडरिक लिस्ट की एक किताब का भी उर्दू मे अनुवाद किया। इन अनुवादो मे उन्हे पूरी की पूरी सफलता मिली और वे लोकप्रिय भी हुए।

सन् 1932 ई० मे डाक्टर जाकिर हुसैन को इलाहाबाद मे बुलाया गया। उन्हें अथशास्त्र पर भाषण देना था।

कहना यह चाहिए कि डाक्टर जाकिर हुसैन एक उच्चकोटि के लेखक थे। वे कुछ न कुछ लिखते ही रहते थे। उनमे असीम प्रतिभा थी और वे प्रकाण्ड विद्वान थे। जामिया की पत्रिका मे वे बराबर लिखते ही रहते थे।

डाक्टर जाकिर हुसैन ने बाल साहित्य भी बहुत लिखा है। उन्होने रुक्का ए रिहाना के नाम से जामिया पत्रिका मे लिखा। पयाम ए-तालीम मे भी खूब लिखा।

डाक्टर जाकिर हुसैन को प्रकृति से प्रेम था। उन्हे चित्र बनाने और बागवानी का शौक था।

सन् 1961 ई० मे डाक्टर जाकिर हुसैन की कृतियो की एक प्रदर्शनी हुई। उन्ह गुलाब का बहुत शौक था। वे जब अपनी रूस यात्रा पर गए थे तो वहा से गुलाब के कुछ पौधे लाए थे।

जाकिर हुसैन ने जमनी मे शिक्षा ग्रहण की। वे थाईलैण्ड गए। अमेरिका की यात्रा की। कम्बोडिया भी पहुचे। मलेशिया गए। वे जहा भी गए वहा अपने देश भारत के ही गुण गाये।

डा० जाकिर हुसैन कहने के लिए मुसलमान थे लेकिन सच्चे रूप मे वे एक भारतीय थे और अपने लिए कहते थे कि मैं हिन्दुस्तान का बेटा हू और हिन्दुस्तान मेरा वतन है। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख और ईसाई—हम सब आपस में भाई-भाई हैं।

सन् 1963 ई० मे डाक्टर जाकिर हुसेन को भारतरत्न की उपाधि दी गई। उन्हे इस अलकरण से अलकृत किया गया और इस तरह राष्ट्रीय सम्मान देकर उन्हे सम्मानित किया गया।

डाक्टर जाकिर हुसैन कविता भी लिखते थे और कविता से उन्हे बहुत अधिक प्रेम था। अधिकाश वे फारसी कविताए पढते।

जाकिर हुसैन को हृदय-रोग हो गया था। इसीलिए जब दिल का दौरा पड जाता तो वे परेशान हो जाते और ऐसा लगता कि अब उनके जीवन का अतिम समय आ गया है।

डाक्टर जाकिर हुसैन ने गरीबी के दिन देखे थे। वे न जाने कितनी कठिनाई से पढे। मगर आगे बराबर पढते रहे। पीछे घूम कर नही देखा कि क्या छोडकर आए हैं। वे प्रगतिशील थे। उनमे सर्वोतोमुखी प्रतिभा थी। वह जमाने के साथ-साथ चल रहे थे और उनकी कोशिश यही थी कि वह जमाने को ही बदल देंगे। उन्होने कभी नही सोचा था कि एक दिन भारत के राष्ट्रपति बनेंगे। उन्हें यह भी पता नही था कि उनको भारतरत्न दिया जाएगा।

वह कुआ खोदकर पानी पीते। यह आदत उनको बचपन से थी वह अधेरे मे भी उजाला खोजते। उनका पूरा विश्वास था कि घने से घने अधकार मे भी प्रकाश की एक किरण अवश्य होती है।

आज डाक्टर जाकिर हुसैन हमारे बीच मे नही हैं, लेकिन हम उन्हें कभी भुला नही पाएगे। वह राष्ट्र के गौरव थे और हमारे राष्ट्रपति थे।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू के पिता मोतीलाल नेहरू का जन्म आगरा मे हुआ था। वे 6 मई 1861 ई० मे पैदा हुए थे। वे वकालत करने लगे। इलाहाबाद मे उन्होने आनन्द भवन बनाया। नाम और पैसा खूब कमाया। वे एक प्रसिद्ध वकील थे।

सन् 1889 ई० मे मोतीलाल के घर मे 14 नवम्बर को एक पुत्र का जन्म हुआ। उसका नाम जवाहरलाल रखा गया।

बचपन मे जवाहरलाल घर पर ही पढाए जाने लगे। उनकी माता का नाम स्वरूप रानी था। वे धार्मिक विचारधारा की नारी थी। वे अपने पुत्र जवाहरलाल को रामायण की कहानिया सुनाती। बालक को महाभारत की कथाए भी खूब रुचि से सुनाती। यही नही वे बालक जवाहरलाल को पुराणो की भी कथाए सुनाती।

एक बूढे पण्डित जवाहरलाल को घर पर हिन्दी पढाते। वे बालक को सस्कृत की भी शिक्षा देते।

एक मौलवी साहब थे। उनका नाम मुशी मुबारक अली था। वे जवाहरलाल को फारसी पढाते। इसके अतिरिक्त वे बालक को सन् 1857 ई० के गदर की कहानिया भी सुनाते। उनका कहना था कि हिन्दुस्तान की यह आजादी की पहली लडाई थी, जो आजादी पाने के लिए अग्रेजो से लडी गयी थी।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू के बचपन के एक और शिक्षक थे। ये अग्रज थे। इनका नाम मिस्टर ब्रुक्स था। ये उन्हें अग्रेजी पढाते।

बचपन मे ही जवाहरलाल नेहरू ने श्रीमती ऐनीबेसेंट का नाम सुना था। वे उनसे प्रभावित हुए।

जवाहरलाल को घुडसवारी का बहुत अधिक चाव था। तैरना भी उन्होने खूब अच्छी तरह सीख लिया। उसमे पूर्णतया पारगत हो गए। टेनिस का खेल वे खूब खेलते और अपने अन्त समय तक खेलते ही रहे।

पन्द्रह साल की उम्र मे जवाहरलाल इग्लैंड भेज दिए गए। वे वहा हैरो कालेज मे भर्ती हो गए। यह कालेज ऐसा था कि इसमे ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमत्री चर्चिल ने भी शिक्षा पाई थी।

इसके बाद जवाहरलाल कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालेज मे आए। अब वह अण्डर ग्रेजुएट हो गए थे। वहा तीन साल तक पढते रहे।

इस समय भारत मे महात्मा गाधी आजादी लेने के लिए अपना आन्दोलन चला रहे थे। देश की पूरी जनता उनके साथ थी और वह स्वराज्य की माग कर रही थी।

युवक जवाहरलाल भी सोचने लगे कि उन्हे किस क्षेत्र मे जाना चाहिए। वे सात साल तक इग्लैंड मे रहे और फिर भारत लौट आए।

जब वे भारत आए, तो आते ही वकालत शुरू कर दी। वे बैरिस्टर थे। बहुत ऊचे दर्जे के वकील थे। साधारण मुकदमे नही लेते। उनका ब्याह कमला नेहरू के साथ हो गया। दो साल बाद इदिरा गाधी का जन्म हुआ।

जवाहरलाल का मन वकालत मे नही लग रहा था। वह काग्रेस के सदस्य बन गए थे। उन्होने सन् 1912 ई० मे बाकीपुर पटना मे काग्रेस अधिवेशन मे भाग लिया। इस अधिवेशन मे वे प्रतिनिधि बनकर गए थे। वही उनका परिचय महात्मा गाधी से हुआ। महात्मा गाधी ने उन्हें स्नेह दिया, और वे उन्हें श्रद्धा की

की उपाधि दी गई। इससे उनका गौरव वहुत अधिक वढ गया और वे सवके प्यारे वन गए।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू का एक ही नारा था कि आराम हराम है। वह बच्चो से वहुत प्यार करते। पूरे देश के बच्चे उन्हे चाचा नेहरू कहकर पुकारते थे। आज भी 14 नवम्बर को उनके जन्म दिवस पर सम्पूर्ण देश मे वाल दिवस मनाया जाता है। यह एक राष्ट्रीय त्योहार वन गया है।

नेहरू जी को लाल गुलाब वहुत पसन्द था। वह सफेद चूडीदार पैजामा पहनते। उस पर लम्बी अचकन होती। उसी अचकन की बायी ओर ऊपर की जेव मे लाल गुलाव का फूल लगा रहता।

नेहरू जी का जन्म बीसवी सदी मे हुआ था। यह सदी सौभाग्य की थी। देश मे प्रजातन्त्र आया। भारत सभी राष्ट्रो का मित्र बन गया। वह दूसरे देशो से सहयोग देने और लेने लगा।

यह नेहरूजी की योग्यता थी कि एक ओर पूजीपति अमेरिका भारत का गहरा दोस्त था और दूसरी तरफ साम्यवादी सोवियत सघ भी भारत का मित्र था।

नेहरू जी न जाने कितनी वार जेल गए। वह सभी नेताओ के प्यारे थे। उन पर सवको गर्व था। उनका भाषण जहा भी कही होता, तो उसे सुनने के लिए लाखो की भीड उमड आती। वह सव पर जादू डाल देते। उनकी वाणी मे इतना ओज था।

देश का बटवारा हो जाने के वाद हिन्दू और मुसलमानो मे दगा होने लगा। जो हिन्दू पाकिस्तान मे थे, उन्हे निकाला जा रहा था। इसी तरह जो मुसलमान भारत म थे, उनसे जनता कहती कि तुम पाकिस्तान जाओ।

नेहरू जी ने इस परिस्थिति पर भी काबू पाया और पूरे देश

मे शान्ति हो गई।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू एक महान साहित्यकार थे। वह उच्चकोटि के लेखक थे। उन्होने बहुत-सी पुस्तके लिखी, जिन्हे सारे ससार ने अपनाया और उनकी भूरि-भूरि प्रशसा की।

हिन्दी मे एक पुस्तक नेहरू जी की ऐसी छपी है। जिसमे उनके पत्रो का सकलन है। ये पत्र उन्होने जेल से अपनी पुत्री इदिरा को लिखे थे। इसीलिए इस पुस्तक का नाम 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' रखा गया है।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू राजनीति के चक्कर मे पडे रहे। उन्हे समय नही मिल पाया। इसीलिए अधिक नही लिख सके।

फिर भी नेहरू जी ने जो कुछ भी लिखा है वह उच्चकोटि का साहित्य है। 'मेरी कहानी' उनकी अमर पुस्तक है। इसमे उनकी आत्मकथा लिखी है। यह पुस्तक इतनी अधिक रोचक है कि पढने वाले को मुग्ध कर देती है।

नेहरू जी कि पुस्तको मे उनके भीतर का कलाकार बोलता है। साहित्य और कला की दृष्टि से वह अनुपम है। उनमे राजनीति बहुत कम मिलती है।

'मेरी कहानी' पूरे ससार मे लोकप्रिय हुई। ऐसे ही भारत की खोज भी उनकी एक चर्चित पुस्तक है। उन्होने इतिहास पर भी एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम 'विश्व इतिहास की झलक' है।

सर्वपल्ली डाक्टर राधाकृष्णन ने नेहरू जी के साहित्य के लिए कहा था कि वह पहाडो का वणन बहुत ही सजीव करते। उनका साहित्य कहता है कि वह प्रकृति के प्रेमी है। बच्चो से भी उन्हे बहुत अधिक प्यार है।

नेहरू जी ने फूलो का वर्णन भी खूब किया है। वह अपने साहित्य मे पशु-पक्षियो को तनिक भी नही भूले। यह उनकी गहरी सूझ का परिचय देता है।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने एक पुस्तक और लिखी है, जिसका नाम 'भारत की एकता' है। इस पुस्तक मे उन्होने एकता पर जोर दिया है और सरल ढग से समझाया है कि जिस दिन हम सब भारतीय एक हो जायेगे तो हमारा राष्ट्र उन्नति की चोटी पर पहुच जायेगा।

पण्डित नेहरू के लिए कहा जाता है कि वे केवल भारत के बच्चो के ही चाचा नही थे, पूरे ससार के बच्चे उन्हें चाचा नेहरू कहते। नेहरू जी जनता की आखो के तारे थे। वह अग्रेजी के प्रकाण्ड विद्वान थे, लेकिन फिर भी हिन्दी अच्छी तरह बोलते और वैसे ही लिखते भी थे।

सन् 1964 ई० मे नेहरू जी की मृत्यु हो गयी। वह मई का महीना था और 26 तारीख थी। दिन के तीन बजे थे। ससार का प्यारा नेता दुनिया से विदा हो गया। एक बार फिर यह कहना पडता है कि वह देश के ही नही पूरे विश्व के नेता थे।

आज दिल्ली मे पडित जवाहरलाल नेहरू की समाधि है जिसे हम शान्ति वन कहते हैं। विश्व शान्ति का दूत उसी मे सो रहा है। वह मर कर भी अमर है। ससार उसे कभी नही भूल सकता।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने देश हित के लिए जितना काम किया, उससे कही अधिक उन्होने ससार को अपना प्यार दिया। जिस देश में पहुच जाते वही उनकी पूजा होती और वह देश अपने को बहुत भाग्यशाली समझता।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू इग्लड मे पढ़े थे। लदन मे बहुत दिन तक रहे थे। यही कारण था कि इग्लड से उनकी घनी मित्रता थी।

फ्रास भी उनका एक प्रिय देश था। अमेरिका से उन्होने नया नाता जोडा था। रूस भी उनका घना मित्र था। वह स्वय अपने मुह से कहते थे कि हिन्दी-रूसी भाई-भाई।

डाक्टर भगवानदास

डाक्टर भगवानदास का जन्म सन् 1869 ई० में बनारस में हुआ था। यह जनवरी का महीना था और तारीख 12 थी। इनके पिता का नाम साहू माधवदास था। ये बनारस नगर के एक माने हुए साहूकार थे। इनके पूर्वज भी साहूकार थे। उन लोगों ने यश और धन दोनों पाए। वह चंदा देने में सबसे आगे थे। काशी नागरी प्रचारिणी सभा को चंदा दिया। तब उसकी आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। हिन्दू कालेज की स्थापना में भी इन साहूकारों ने सहयोग किया।

तब देश में फारसी और उर्दू पढ़ने का प्रचलन था। यही कारण था कि भगवानदास को भी उर्दू पढ़ाई जाने लगी। उन्हें फारसी का भी ज्ञान कराया जाने लगा। उनकी बुद्धि तीव्र थी। पढ़ने में मन खूब लगता।

भगवानदास को संस्कृत भी पढ़ाई गई। सबसे पहले उन्होंने संस्कृत की उस पाठशाला में अध्ययन किया, जो भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा आरम्भ की गई थी। फिर वह क्वींस कालेज में भर्ती हुए और हाई स्कूल कर लिया।

भगवानदास ने इण्टरमीडिएट पास किया। उसके बाद बी० ए० भी किया। तब इलाहाबाद में विश्वविद्यालय नहीं था।

सन् 1932 ई० में गांधी जी ने भगवानदास को अपने पास बुलाया। उस समय वह यर्वदा जेल में थे। यह जेल पूना में थी। गांधी जी ने भगवान दास को यह काम सौंपा कि वह हरि-

जनो का उद्धार करे। उन्हे मदिरो मे प्रवेश दिलवाए।

भगवानदास इस काय को पूरी लगन के साथ करने लगे और इसमे इन्हे सफलता भी खूब मिली।

सन् 1946 ई० मे भगवानदास को विधान परिपद् के लिए बुलाया गया। उन्होने यह स्वीकार नही किया। वह बधन मे वधना नही चाहते थे।

जब भगवानदास पन्द्रह साल के थे तभी उनका ब्याह हो गया। उनकी पत्नी एक अध्यापक की बेटी थी।

आरम्भ मे भगवानदास ने करीब आठ साल तक नौकरी की। यह नौकरी सरकारी थी। वह इलाहाबाद, कचनपुर और गाजीपुर तहसीलो मे रहे। अपने समय के वह एक माने हुए तहसीलदार थे और उन्हें सर्वथा योग्य बतलाया जाता।

भगवानदास बाराबकी और आगरा मे डिप्टी कलक्टर थे। जब उनके पिता की मृत्यु हो गई, तो उन्होने नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। उनका परिचय श्रीमती एनीबेसेंट से पहले ही हो चुका था। वह उनसे बहुत अधिक प्रभावित थे। उनके होम रूल लीग मे शामिल हो गए और लगन के साथ काम करने लगे। उन्होंने पूरे देश का दौरा किया। इससे इस नतीजे पर पहुचे कि बच्चो को धर्म की शिक्षा देना बहुत जरूरी है।

थ्योसफीकल सोसाइटी का मुख्य कार्यालय मद्रास से बनारस आ गया। यह प्रधान कार्यालय था। इसीलिए श्रीमती एनीबेसेंट भी बनारस म रहने लगी। तभी बनारस मे सेन्ट्रल हिन्दू कालेज खोला गया।

भगवानदास का व्यायाम करना बहुत पसन्द था। वह सवेरे और शाम कसरत जरूर करते। यह उनका नित्य का नियम था।

एक मजे की बात और थी कि जब वह अपनी बग्घी पर

बैठते तो कोचवान को छुट्टी दे देते बग्घी खुद चलाते। इसमे उन्हे आनन्द आता।

भगवानदास एक उच्चकोटि के लेखक थे। जब वह तीस साल के थे तो अपनी पहली पुस्तक लिखी। इस पुस्तक का अग्रेजी मे नाम था 'साइस ऑफ इमोशन्स'।

हिन्दी मे यह 'भावनाओ का विज्ञान' के नाम से प्रसिद्ध है।

इसके बाद भगवानदास 55 साल तक लिखते ही रहे। 85 साल की उम्र हो जाने पर भी लेखनी उनके हाथ से नही छूटी।

उन्होने अग्रेजो और हिन्दी दोनो भाषाओ मे खूब लिखा है। इनका पूरा साहित्य लोकप्रिय है, इसमे कोई सन्देह नही। भगवानदास की पुस्तके केवल हमारे देश भारतवर्ष मे ही नही, बल्कि पूरे ससार मे प्रसिद्ध है। उन्होने उच्चकोटि का साहित्य दिया है इसीलिए सराहनीय है।

भगवानदास राजनीति के पण्डित थे। वह देश के एक बहुत बडे नेता थे। वह महान विद्वान और आदर्श पुरुष थे।

कराची मे जब काग्रेस का महा अधिवेशन हुआ था, तो उसमे डाक्टर भगवानदास को अध्यक्ष बनाया गया।

भगवानदास ने दशन साहित्य पर भी खूब लिखा है। वह एक अच्छे शिक्षक थे। उन्होने राजनैतिक न जाने कितने लेख लिखे हैं।

काशी मे जब काशी विद्यापीठ खुली, तो डाक्टर भगवान-दास को महान हर्ष हुआ। वह उसमे अध्यापन कार्य करने लगे और शीघ्र ही प्रिंसिपल बना दिए गए।

वह जनता के सेवक थे और जीवन-भर जनता की सेवा करते रहे। उनका कहना था कि जनसेवक को स्वार्थहीन होना चाहिए। जिसमे स्वार्थ की तनिक भी भावना है वह जनता का सेवक कभी नहीं हो सकता।

जब डाक्टर भगवानदास बनारस मे म्युनिसिपल बोर्ड के चेयरमैन थे, तो उन्होने प्राइमरी स्कूलो मे सुधार किया। वहा तकली और चरखा कातने की शिक्षा दी जाने लगी।

भगवानदास स्वाभिमानी पुरुष थे। वह हमेशा खादी पहनते और खादी से उन्हे बेहद प्यार था।

भगवानदास को जेल भी जाना पडा। जब प्रिन्स आफ वेल्स भारत आए थे, तो उनके आगमन का विरोध किया गया। डाक्टर भगवानदास को एक साल की सजा हो गई। वह राष्ट्र के लिए जेल आए। उन्हे अग्रेजो से घृणा होने लगी। उनका चित्त अशात हो गया था। इसीलिए उन्होने गीता का अनुवाद किया। यह अनुवाद अग्रेजी मे किया गया था और इस अनुवाद को करने मे श्रीमती एनीबेसेट का उ हे अत्यधिक सहयोग मिला।

भगवानदास का जीवन कई भागो मे बटा था, जिसका विवरण इस तरह है कि बीस साल की उम्र तक वह विद्यार्थी रहे। विद्या अधिक से अधिक पढी और एक महान विद्वान बन गए। इसके बाद फिर वह सरकारी नौकरी करने लगे। आठ साल तक सरकारी नौकरी करने के बाद वह समाज-सेवा मे व्यस्त हो गए।

जब डाक्टर भगवानदास 57 साल के हो गए, तो उनका मन सभी ओर से हट गया। वे चुनार मे आ गए। यही उनका घर था। यह चुनार उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले मे है।

भगवानदास ने अपना घर बनवाया और आनन्दपूर्वक उसमे रहने लगे। यहा उन्हे शाति का अनुभव हुआ।

कहना यह चाहिए कि डाक्टर भगवान दास वानप्रस्थ आश्रम मे पहुच गए।

डाक्टर भगवानदास के पौत्र का निधन हो गया। तब से वह बहुत दुखी रहने लगे। उ हे हृदय-रोग हो गया और दिल का दौरा पडने लगा।

भगवानदास की मृत्यु दिल के दौरे से नहीं हुई। उनके गुर्दे खराब हो गए थे। वे काम नहीं करते थे। बहुत इलाज किया गया, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ।

डाक्टर भगवानदास का अपना घरेलू पुस्तकालय था जिसमें बहुत सी पुस्तकें थीं। अपने मरने से पहले भगवानदास ने बहुत-सी पुस्तकें बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय को भेंट कर दीं।

कुछ पुस्तकें भगवानदास ने काशी विद्यापीठ को भी दान की थीं।

भगवानदास चाय बहुत कम पीते। वह कॉफी अधिक पसंद करते थे। उनका कहना था कि कॉफी पीने से बदन में फौरन ही स्फूर्ति आ जाती है और काम करने में मन लगने लगता है। एक बार किसी ने कह दिया कि कॉफी और चाय तो एक हल्का विष होता है। इस पर भगवानदास हंस दिए और उत्तर देते हुए कहने लगे कि हां यह जहर पीने के कारण ही मैंने इतनी लम्बी उम्र पाई है। मुझे बतला दो कि आजकल 85 साल तक कौन जिन्दा रहता है ?

सन् 1955 ई० में डाक्टर भगवानदास को भारतरत्न की उपाधि दी गई। तब देश के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद थे। ये स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति थे। बाबू राजेन्द्र प्रसाद ने अपने कर-कमलों से डाक्टर भगवानदास को भारतरत्न का अलंकार दिया। उन्होंने बड़ी श्रद्धा के साथ भगवानदास को अलंकृत किया था।

जैसाकि पहले कहा जा चुका है कि वे अंतिम समय तक लिखते रहे। यह बिल्कुल सच है। उनकी अन्तिम रचना 'विधि-धार्थ' थी। इसका प्रकाशन सन् 1958 ई० में हुआ। कहा जाता है कि यह उनकी आखिरी पुस्तक थी। इसी साल उनकी मृत्यु हो गई।

सन् 1958 ई० मे आठ वजे रात को उनका देहान्त हुआ। तब महीना सितम्बर का था और 18 तारीख थी।

डाक्टर भगवानदास के लिए विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टगोर का कहना था कि वह बहुत बडे दार्शनिक थे। वह बुद्धिमान और योग्य थे। उन्हे दर्शनशास्त्री कहना चाहिए।

डाक्टर भगवानदास धर्म-निरपेक्ष थे। उनकी मित्रता सर सैयद अहमद खा से थी। जबकि वह स्वामी दयानन्द सरस्वती के भी मित्र थे। वह सभी वर्गों के लोगों का आदर करते और उन्हें सम्मान की दष्टि से देखते। वह अधिकाश गम्भीर रहते। यह उनका स्वभाव बन गया था।

स्वामी श्रद्धानन्द से भी डाक्टर भगवानदास को दोस्ती थी। वह प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार बाबू श्यामसुन्दर दास के भी अभिन्न मित्र थे। सर जगदीशचद्र वसु भी उनके मित्रो में से थे।

डाक्टर भगवानदास के विदेशी मित्र भी थे। इनमे मोन शायर शेवरिलन थे। ये एक मशहूर फ्रासीसी लेखक थे। जापान के एकाई कावागूची भी इनके दोस्त थे। ये जापान के महान लेखक और विद्वान थे।

हमारे डा० भगवानदास ने चीन के लेखको से भी मित्रता की। उनके घनिष्ठ मित्र चोन के प्रसिद्ध लेखक लिन युताग थे।

इसी तरह कई देशो के लेखक उनके मित्र थे। वह सभी के प्रिय थे। इसीलिए उन्हे लोकप्रिय कहा जाता।

मरुदूर गोपालन रामचद्रन

मरुदूर गोपालन रामचद्रन का जन्म सन् 1917 ई० मे श्रीलका मे हुआ था। वहा केंडी नामक स्थान मे उनकी जन्मभूमि है। वह 17 जनवरी को पैदा हुए थे। उनके पिता मल्याली परिवार के थे। उनका नाम श्री गोपालन मेनन था। वह कैंडी मे मजिस्ट्रेट के पद थे। तब सीलोन जिसे आजकल श्रीलका कहते हैं, वह भी भारत की तरह अग्रेजो का गुलाम था। ये पाच भाई-वहन थे। सब मे यही छोटे थे। अभी ये दो साल के ही थे कि इनके पिता का देहान्त हो गया। इनकी माता का नाम सत्यभामा था। पति की मृत्यु के वाद वे बच्चो को लेकर तजाबूर चली आई।

वालक मरुदूर गोपालन रामचद्रन देखने मे बहुत ही आकर्षित लगता। वह देखने वाले का मन मोह लेता। जब वह सात साल के थे, तभी से नाटक कम्पनी मे काम करने लगे। इसके लिए मे मदुरै जाते और वहा की नाटक कम्पनी मे काम करते।

वह आवश्यकता से अधिक सुन्दर थे। इसीलिए उनको नारी की भूमिका दी जाती जिसे वह बडे ही सरल ढग से निभाते।

सन् 1930 ई० मे गोपालन रामचद्रन को पुरुष की भूमिका मिली। तब ये तेरह साल के थे। इस नाटक का नाम सती लीलावती था और इन्हे पुलिस पात्र बनाया गया था। यह फिल्म थी। यही से इनका प्रवेश फिल्मो मे हुआ।

तब मूक सिनेमा बनते थे। बोलपट का प्रचलन नही हुआ था।

सन् 1954 ई० मे ये सवाक फिल्म मे आए। इनकी प्रशसा होने लगी और इन्हे काम पर काम मिलने लगा।

तमिल फिल्मो मे गोपालन रामचद्रन ने बहुत दिन तक काम किया। वह दर्शको के प्यारे हो गए और उनकी तारीफ के पुल बाधे जाने लगे।

गोपालन रामचद्रन ने आरम्भ से ही नाटको और फिल्मो मे नायक की भूमिका अभिनीत की। यही कारण था कि वह शुरू से लेकर आखिर तक फिल्मो मे नायक बनकर ही आते रहे। उनका रग आवश्यकता से अधिक गोरा था। देखने मे बहुत प्यारा लगता। काया ऐसी लगती कि मानो कचन की हो। उनके चेहरे मे आकर्षण ही आकर्षण था। वह देखने वाले को बर-बस ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते।

उनके लिए कहा जाता है कि वह सुन्दर और स्वस्थ बने रहने के लिए एक दवा खाते थे। यह आयुर्वेदिक औषधि थी। इसका नाम तग बसमम था। यह सोने की भस्म से बनायी जाती थी।

गोपालन रामचद्रन की दिनचर्या नियमित थी। उनका कोई भी काम ऐसा नही था जो नियम से न होता हो।

एक बात और थी। मरुदूर गोपालन रामचद्रन कहने के लिए तो फिल्मी कलाकार थे, लेकिन वे सिगरेट कभी नही पीते और न शराब को हाथ लगाते।

गोपालन रामचद्रन को अपनी फिल्मी भूमिकाए बहुत अच्छी लगतीं। वह अन्नादुरै से बहुत प्रभावित थे। उनके निर्देशन मे उन्होने बहुत समय तक काम किया।

सन् 1972 ई० मे गोपालन रामचद्रन ने एक सस्था बनायी।

उसका नाम अन्नाद्रविड मुनेत्र कषगम था।

गोपालन रामचद्रन ने समाज की सेवा भी की। उन्होंने देश हित के लिए भी त्याग किया। वह काग्रेस मे आ गए और कामराज के भक्त बनकर कार्य करने लगे।

सन् 1962 ई० मे जब भारत का चीन के साथ युद्ध हुआ था, तब पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने देश के लोगो से आर्थिक सहयोग के रूप मे धन की माग की थी।

तब गोपालन रामचद्रन ने उस कोप मे एक लाख रुपया दिया था।

सन् 1979 ई० मे गोपालन रामचद्रन मुख्यमत्री बने। उन्होंने तमिलनाडु की सामाजिक परिस्थिति को ठीक किया।

उन्हे पोनमन चेमल कहा जाने लगा था। इसका मतलब यह हुआ कि वह सोने के हृदय वाले पुरुष थे।

अधिक लोकप्रियता प्राप्त करने के बाद वे देश नेता बन गए। उन्होने किसी के भी साथ कभी ऐसा व्यवहार नही किया जिससे वह नाराज हो जाता।

गोपालन रामचद्रन पक्के काग्रेसी थे। वह हमेशा खादी के कपडे पहनते। नित्य नियम से चरखा चलाते। वह धर्मपरायण भी थे। गीता का नित्य पाठ करते। यही कारण था कि उनकी आस्था दिन पर दिन धर्म की ओर बढती चली जा रही थी।

सन् 1984 ई० मे उनके गुर्दे बेकार हो गए। वह बिल्कुल काम नही करत। इसीलिए बीमारी बहुत ज्यादा बढ गई थी।

वह तीन साल तक इस रोग से लडते रहे, अन्त मे उनकी मृत्यु हो गई। उनकी शवयात्रा मे सभी प्रमुख लोग शामिल हुए। प्रधानमन्त्री और अन्य नेता भी मद्रास आ गए। राष्ट्रपति वहा पहले से ही मौजूद थे।

मृत्यु के बाद मरुदूर गोपालन रामचद्रन को भारतरत्न की

उपाधि दी गयी। यह अलकरण उनकी पत्नी श्रीमती जानकी रामचद्रन को दिया गया।

मरुदूर गोपालन रामचद्रन को एम० जी० आर० भी कहा जाता था। वह तमिल प्रदेश के नेता थे, अभिनेता थे। इसीलिए सबके प्यारे थे। वह कभी किसी का अपमान नही करते। इससे उन्हे महान दुख होता। उनका कहना था कि अगर तुम किसी का भला नही कर सकते हो, तो बुरा भी करने का तुम्हे कोई अधिकार नही है।

वह हमेशा मुस्कराते रहते और लोगो से भी कहते कि हसकर जीओ। हसकर जीना ही सच्ची जिन्दगी है। उनसे लोगो को प्रेरणा मिलती। वह बतलाते कि राष्ट्र के लिए कुछ करना ही सच्ची राष्ट्रपूजा है। देशभक्त वही लोग कहलाते हैं जो अपने राष्ट्र की तन, मन और धन से सेवा करते हैं।

गोपालन रामचद्रन अब हमारे सामने नही हैं, लेकिन वह अमर हैं और उनकी फिल्मे तथा देशभक्ति हमे हमेशा प्रेरणा देती रहेगी।

डाक्टर धोन्धू केशव कर्वे

डाक्टर धोन्धू केशव कर्वे का जन्म सन् 1857 ई० मे हुआ था। तब पुणे पेशवाओ की राजधानी थी। ये मराठा थे। इनके पूर्वज व्यापार करते थे। ये भट थे, जिन्हे अग्निहोत्री ब्राह्मण कहा जाता।

वीखू और धोन्धू दो भाई थे। इनके परिवार मे भिक्षा लेने का नियम था। लेकिन परिवार स्वाभिमानी था। इनकी माता का कहना था कि हम गरीब जरूर हैं, भिक्षा किसी से नही लेंगे।

धोन्धू केशव कर्वे के पिता का नाम केशव पत था। ये कोरे गाव मे रहते थे। ये केशव पत अपने बचपन मे बहुत अमीर थे और इन्होने अमीरी के दिन देखे थे। जब इनका ब्याह हुआ, तो घर खोखला होने लगा था। उनकी पत्नी का नाम लक्ष्मीबाई था। परिवार गाव मे रहता। केशव पत कोरे गाव मे नौकरी करते।

केशव पत के कई बच्चे हुए, लेकिन तीन बच्चे जीवित रहे। धोन्धू के बडे भाई वीखू थे। इनकी एक छोटी बहन थी। उसका नाम अम्बा था।

धोन्धू केशव कर्वे गाव के स्कूल मे पढे। वह मराठी पढ रहे थे। जब चौथी कक्षा मे आए, तो फेल हो गए। इसके बाद वह दपोली के अग्रेजी स्कूल मे पढने लगे। वह मुग्ध गाव के रहने वाले थे। दपोली वहा से छह मील दूर था। उनकी गणित मे रुचि थी। वह बचपन से ही धर्मपरायण थे और पूजा रोज करते।

जब कोई भी धार्मिक पर्व आता तो धोन्धू श्लोक पढ़ते। वह कीर्तन खूब करते थे। नाटक देखने का उन्हें बड़ा चाव था। उन्होंने एक पुस्तकालय खोला। यह वाचनालय था। यहां से लोग पुस्तक घर नहीं ले जाते, बल्कि वहीं बैठकर पढ़ते। समाचार पत्र भी उस पुस्तकालय में आते थे। धोन्धू कर्वे इस वाचनालय का संचालन बड़ी लगन के साथ करते। वह पाठकों के साथ बहुत ही अच्छा व्यवहार करते।

तब मराठी का छठा दरजा पढ़ने के लिए बम्बई जाना पड़ता था। इसके अलावा यह सुविधा सतारा में थी, यह फिर रत्नगिरि में।

धोन्धू कर्वे 17 साल के थे। उन्हें इसलिए वहां दाखिला नहीं मिला। वह अपने बड़े भाई के साथ कोल्हापुर आ गए। वहां छठी कक्षा पास की और अंग्रेजी पढ़ी।

दो साल बाद उन्हें बम्बई जाना पड़ा। उनके पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उन्हें दो रुपये की छात्रवृत्ति मिलने लगी। तब सस्ता जमाना था।

धोन्धू कर्वे अपने गांव मरध में चले आए। वह पांच रुपये महीने पर शिक्षक की नौकरी करने लगे, अध्यापन कार्य के साथ ही साथ उन्होंने अपनी पढ़ाई भी जारी रखी। वह बी० ए० में फेल हो गए। लेकिन साहस नहीं छोड़ा। बम्बई का वातावरण उन्हें अच्छा लग रहा था। इसीलिए बम्बई में रहने लगे और बम्बई विश्वविद्यालय में दाखिला ले लिया।

सन् 1884 ई० में डाक्टर धोन्धू केशव कर्वे ने बी० ए० कर लिया। इसके बाद उन्होंने एम० ए० किया। उनका ब्याह हो गया था। उनकी पत्नी का नाम राधाबाई था। एक पुत्र भी था, जिसका नाम रघुनाथ था। वह पत्नी और पुत्र को बम्बई ले आए। ट्यूशन करके अपना गुजारा करने लगे।

इसके बाद धोन्धू केशव कर्वे एक एल फिन्स्टिन कालेज मे पढाने लगे। यहा भी वह ट्यूशन करते थे। उन्होने भौतिक विज्ञान मे एम० ए० कर लिया।

फिर केशव कर्वे कायेड्रल गर्ल्स हाई स्कूल मे गणित पढाने लगे। एलक जण्डिया गर्ल्स स्कूल मे भी पढाते। यहा अग्रेज लड-कियां ही पढती थी।

तभी एक मराठा हाई स्कूल खुला। कर्वे उसमे जाकर पढाने लगे। वह घर से पैदल जाते और पदल ही आते। कठोर परिश्रम कर रहे थे।

ऐसे मे ही उन पर वज्रपात हो गया। राधाबाई दुनिया से विदा हो गई।

कर्वे को पुन के फर्ग्यूसन कालेज मे शिक्षक का काम मिल गया।

सन् 1856 ई० मे विधवा विवाह का कानून बन गया था। महाऋषि कर्वे इस क्षेत्र मे उतर आए और समाज की सेवा करने लगे। उन्होने अपने एक मित्र की विधवा बहन से ब्याह कर लिया। उनके इस मित्र का नाम नरहर पत था। उनकी दूसरी पत्नी गेडूबाई थी।

कर्वे ने जो यह कदम उठाया था, उसकी खूब प्रशसा हुई। समाचार पत्रो ने भी उनके इस साहस को सराहा। उन्होने पत्नी का नाम गेडूबाई की जगह आनदीबाई रख दिया।

कर्वे ने एक बालिका आश्रम भी खोला। इसमे विधवाओ को ही रखा जाता था।

धोन्धू कर्वे इस आश्रम को परिश्रम और साहस के साथ चलाने लगे। उन्होने आलोचना की। कोई भी परवाह नही की।

जापान मे उस समय एक महिला विश्वविद्यालय खोला गया था। डाक्टर धोंधू केशव कर्वे का भी मन था कि वह भी अपने

देश भारत मे ऐसा विश्वविद्यालय खोले।

सयोगवश उनकी भेंट श्रीमती एनीबेसेंट से हो गई। एनी-बेसेंट ने जब उनके मन की बात सुनी, तो बहुत प्रसन्न हुई। उन्होने विश्वविद्यालय खोलने का सुझाव दिया और उसके लिए चदा भी दिया।

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी उनका साहस बढाया।

महात्मा गाधी को भी धोघू कर्वे की यह योजना अच्छी लगी। विश्वविद्यालय खुल गया था। लेकिन महात्मा गाधी का कहना था कि उस विश्वविद्यालय मे केवल देश की ही भाषा पढाई जाएगी।

किंतु कर्वे ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नही किया। उनका कहना था कि अग्रेजी पूरे ससार की भाषा है। उसका पढाया जाना बहुत जरूरी है।

गाधीजी ने भी इस विश्वविद्यालय को चदा दिया।

सन् 1942 ई० मे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय ने धो धू कर्वे को निमत्रण दिया। वह आचार्य हो गए थे। उन्हे आचाय कर्वे भी कहा जाता। इस विश्वविद्यालय ने उन्हे डाक्टर की उपाधि दी।

इसके बाद जब नौ साल बीत गए तो पुर्णे ने उन्हे डी० लिट० की डिग्री दी।

अब कर्वे पूरे सौ साल के हो गए थे। उनकी जन्म-शताब्दी मनाई गई। यह समारोह पूरे देश-भर मे उल्लास के साथ मनाया गया। इसी समय हमारी भारत सरकार ने आचार्य कर्वे को पद्मभूषण की उपाधि प्रदान की।

बम्बई यूनीवर्सिटी ने भी धोघू को डाक्टर ऑफ लॉ की उपाधि दी।

सन् 1958 ई० मे जब गणतत्र दिवस का दिन था, तो केशव कर्वे को हमारे देश ने भारतरत्न का अलकार दिया। इस समय

उनका सम्मान किया गया और खूब धूमधाम मनाई गई।

आप धोन्धू कर्वे 105 साल के हो गए थे, लेकिन वह पूरी तरह स्वस्थ थे और उनके सभी कार्य नियमित रूप से होते। अचानक बीमार पडे और कुछ भी समय नहो लगा वह मौत को गोद मे सो गए।

मृत्यु से पहले कर्वे पूरी तरह स्वस्थ थे। कोई नहो कह सकता था कि उनकी अभी मौत हो जाएगी।

नवम्बर का महोना था। तारोख 9 थी। सन् 1962 ई० था। हमारे आचार्य कर्वे हमेशा-हमेशा के लिए हमसे विदा हो गए। उनका चरित्र हमारे लिए एक जीवन-झाको है, जिससे हम जीवन भर प्रेरणा लेते रहेगे।

आचार्य कर्वे ने बचपन से लेकर अपने अंतिम समय तक न जाने कितनी समस्याओ का सामना किया, मगर वे कभी असफल नही रहे। सफलता उनका साथ देतो रही। कठिन से कठिन परिस्थिति मे भी वह तनिक नहो घबडाए और न विचलित हुए। उनका कहना था कि साहस मनुष्य की पूजी है। आदमी सब कुछ हार जाए, लेकिन उसे हिम्मत कभी नहीं हारनी चाहिए।

आचार्य कर्वे ने देश, समाज और जनता के लिए जो कार्य किये हैं, वह सबके सब सराहनोय हैं। शिक्षा के क्षेत्र मे वह अग्रणीय हैं। अध्यापन कार्य करके उन्होने यह सिद्ध कर दिया कि विद्या दान से बडा और कोई दूसरा दान नहो है। जब मनुष्य मे स्वार्थ को कोई भी भावना नहो होगी, तभी वह समाज-सेवा का कार्य कर सकता है। वह सरल स्वभाव के थे। इसलिए उनको लोकप्रियता मिलो।

पाण्डुरग वामन काणे

पाण्डुरग वामन काणे का जन्म सन् 1880 ई० मे हुआ था। ये त्रयोदशो को पैदा हुए थे। चैत का महीना था। तारीख 7 मई थी।

ये चितपावन परिवार मे जन्मे थे। इनके गाव का नाम दापोली था। यह दापोली रत्नगिरि मे है। कहा जाता है कि इनके दादा शकर राव एक बहुत बडे वैद्य थे। वे सस्कृत के महान विद्वान थे।

पाण्डुरग वामन काणे के पिता वामन राव शकर राव थे। ये वकील थे। वामन काणे का जन्म ननिहाल मे हुआ। इस परिवार को चिताली परिवार कहा जाता था।

बालक वामन काणे पर शुरू से ही सस्कृत का प्रभाव पडा। उन्हे सस्कृत पढाई जाने लगी और उसमे वह खूब मन लगाने लगे।

उनकी शिक्षा अपने गाव दापोली से आरम्भ हुई थी। उन्होने हाई स्कूल पास कर लिया। यह सन् 1897 ई० था।

फिर वह पढने के लिए बम्बई चले गए। वहा रहकर बी० ए० की परीक्षा दी और सन् 1901 ई० मे वह ग्रेजुएट हो गए। उन्हे पढाई के कुछ दिन बाद ही छात्रवृत्ति मिलने लगी थी। उन्होंने कानून की परीक्षा भी दी और सन् 1902 ई० मे वकालत पास कर ली। इसके बाद उन्होने अग्रेजी और सस्कृत मे एम० ए० किया। उन्हे वेदान पुरस्कार मिला और उन्ह सम्मानित किया गया।

रत्नगिरि में वह एक हाईस्कूल में अध्यापक नियुक्त हो गए। ह कार्य वह मन लगाकर करते रहे। साथ ही अपनी पढाई ी कर रहे थे। वह शिक्षा की परीक्षा मे प्रथम आए। दूसरे साल शिक्षा विभाग की परीक्षा मे बैठे। उसमे भी सफल रहे।

वामन काणे को शिक्षा विभाग मे निरीक्षक का पद मिल गया, लेकिन उन्होने उसे स्वीकार नही किया। उन्होंने एक निबंध लिखा था। इस पर उन्हे स्वर्ण पदक मिला।

सन् 1907 ई० मे काणे बम्बई बुला लिए गए। उन्हे एल फिस्टन हाई स्कूल मे अध्यापक का कार्य मिल गया।

वह सस्कृत के मुख्य अध्यापक थे। उनका अनुसधान कार्य अब भी अनवरत रूप से चल रहा था।

कुछ दिन बाद वह प्रोफेसर हो गए।

बम्बई विश्वविद्यालय मे वामन काणे को भाषण देने के लिए निमत्रण दिया। उन्होने महत्त्वपूर्ण भाषण दिया। उनकी खूब प्रशसा हुई। उन्हे सौ रुपए महीने की छात्रवृत्ति मिली।

इसके बाद वामन काणे राजकीय कानून विद्यालय मे कानून पढाने का काम करने लगे। और यह अध्यापन कार्य उन्होने छह साल तक किया।

उन्होंने एक पुस्तक लिखी। इसका नाम अलकार साहित्य का इतिहास है। इससे उनकी चर्चा पूरे देश मे फैल गई और वह महान विद्वान कहलाने लगे।

धर्मशास्त्र, साहित्य शास्त्र और इतिहास इन विषयो पर वामन काणे ने बहुत अधिक शोध किया। फिर वह वकालत करने लगे और उनकी वकालत अच्छी चल निकली। लोगो को ताज्जुब हो रहा था कि इतनी जल्दी उन्हें इस क्षेत्र मे सफलता कैसे मिल गई।

वामन काणे मे स्वाभिमान था। वह अपने सम्मान को कभी

ठेस नही लगने देते।

सरकार ने सन् 1933 ई० मे पुन काडेकेन कालेज बद कर दिया। इस पर आपत्ति हुई। मुकदमा चला। वामन काणे ने इस मुकदमे को लडा। उन्हे सफलता मिली।

बम्बई मे ब्राह्मण सभा की वह सेवा करने लगे। 22 साल तक वह वहा के काय को सुचारु रूप से करते रहे।

इस सभा की आर्थिक स्थिति अच्छी नही थी। वामन काणे ने इसके लिए चदा किया और इस तरह धन इकट्ठा किया।

इसी तरह वामन काणे ने बम्बई के मराठी ग्रथ सग्रहालय का भी उद्धार किया। उन्होने इसके लिए भी चन्दा किया और उसकी हालत को सुधारा।

वामन काणे को अन्ना साहब भी कहा जाता है। उन्होने कभी किसी से सहायता नही मागी। वह बम्बई विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे। वह ट्राम से जाते और ट्राम से आते। यह उनका नित्य का नियम था।

वह एक महान लेखक थे। उन्होने अठारह पुस्तके लिखी। मराठी के भी पाच ग्रथो की रचना की। उन्नोस फुटकर लेख लिखे। इसी तरह 21 निबन्ध भी लिखे, जो बहुत ही लोकप्रिय हुए।

वह सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्हे अतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त थी। वह ससद के भी सदस्य थे। वह एक माने हुए वकील थे। ऐसे ही एक कुशल अध्यापक और प्रोफेसर थे। उनका कद औसत था। बदन छरहरा था। रग गोरा था। चेहरा कुछ लम्बा और कुछ गोल था। आखो पर चश्मा चढ़ा रहता। नाक लम्बी थी। वह बद कालर का फारसी कोट पहनते थे। उस पर पैजामा पहनते। सिर पर पगडी बाधते और उनके गले मे हमेशा सफेद दुपट्टा पडा रहता।

वामन काणे बम्बई की चाल मे ही रहे। वही उनका कमरा था। उसी मे लिखते, उसी मे पढते और उसी मे रहते थे। दादर मे उन्होने अपना बगला बनाया। लेकिन उसमे कभी नही रहे। वह हर आने वाले का स्वागत करते और उससे हसकर मिलते। हमारी भारत सरकार ने सन् 1963 ई० मे उन्हे भारतरत्न की उपाधि प्रदान की थी।

वामन काणे की मृत्यु सन् 1972 ई० मे हुई थी। तब अप्रैल का महीना था और तारीख 18 थी।

वामन काणे एक महान पुरुष थे जिनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। वह देश के गौरव थे। हम हमेशा उनको याद करते रहेगे, कभी नही भूलेगे।

पुरुषोत्तमदास टण्डन

पुरुषोत्तमदास टण्डन का जन्म इलाहाबाद मे हुआ था। इसे तीर्थराज प्रयाग भी कहा जाता है। टण्डन जी का जन्म 1 अगस्त, सन् 1882 ई० मे हुआ था। इनके पिता का नाम शालिगराम टण्डन था। सावन के महीने मे इन्होने जन्म लिया था। इस महीने को बहुत पवित्र कहा जाता है।

टण्डन जी के बचपन मे उन्हे हिन्दी पढाई गई। इसे पढाने के लिए उनके घर पर एक मौलवी साहब आते थे।

फिर वे डी० ए० वी० स्कूल मे भर्ती हो गए।

टण्डन जी ने हाई स्कूल की परीक्षा सन् 1897 ई० मे पास की। इसके बाद उन्होने बी० ए० और बी० एस-सी० कर लिया। वे पढने में बहुत अच्छे थे। मिलनसार थे। उन्होने वकालत भी पढी। फिर वकालत करने लगे।

टण्डन जी की इच्छा अभी पढने से नही भरी थी। उन्होने इतिहास से एम० ए० किया।

जब उन्होने हाई स्कूल पास किया था, तभी उनका ब्याह हो गया था। उनकी पत्नी का नाम चन्द्रमुखी था।

कहने के लिए टण्डन जी वकील थे, लेकिन वे सरल स्वभाव के थे। समाज-सेवा मे उनकी गहरी रुचि थी।

टण्डन जी के सात लडके और दो लडकिया थी। पण्डित मदन मोहन मालवीय ने उन्हे नाभा भेजा। वहा राज्य मे उन्हे कानून मन्त्री का पद मिला। वे विदेश मन्त्री भी बन गए।

वे पाच साल तक नाभा मे रहे। उसके बाद प्रयाग आ गए।

जब सन् 1940 ई० मे सत्याग्रह हुआ तो टण्डन जी को फिर जेल जाना पडा ।

अगस्त सन 1942 ई० की क्रान्ति इतिहास मे हमेशा अमर रहेगी। तब आन्दोलन चल रहा था कि अग्रेजो भारत छोडो। टण्डन जी भी राजनैतिक बन्दी के रूप मे जेल भेज दिए गए और वे सन् 1944 मे छूटे थे।

देश के विभाजन का विरोध टण्डन जी ने खुलकर किया, परन्तु बटवारा हो गया ।

टण्डन जी को विधान सभा का सदस्य चुना गया। वे हिन्दी भाषा को प्रोत्साहन देने लगे । मगर उनका कुछ लोगो से मतभेद हो गया। इसीलिए त्यागपत्र दे दिया।

सन् 1952 ई० मे वे लोक सभा के सदस्य बन गए। 1956 ई० तक वे दिल्ली मे रहे ।

उन्होने नेहरू जी का अभिन दन ग्रन्थ सम्पादित किया। उनका स्वास्थ्य दिन पर दिन गिरता चला जा रहा था। लेकिन वे काम बराबर करते रहते थे।

1960 ई० मे टण्डन जी का अभिनदन किया गया। राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद ने प्रयाग मे विशाल समारोह मे पुरुषोत्तम दास टण्डन को अभिनन्दन ग्र थ भेट किया।

फिर 1961 ई० मे उन्हे भारतरत्न की उपाधि दी गई।

1 जुलाई, सन् 1962 ई० मे उनका देहान्त हो गया।

वे भारत की एक महान विभूति थे, महापुरुष थे। एक आदर्श मानव थे। चोटी के लेखक और एक बहुत बडे साहित्यकार थे। हिन्दी भाषा और हिन्दी-भाषी हमेशा उनके आभारी रहेगे। उन्होने हिन्दी की सच्ची सेवा की थी।

आचार्य विनोबा भावे

आचार्य विनोबा भावे का जन्म सन् 1895 ई० मे हुआ था। ये 11 नवम्बर को एक ब्राह्मण परिवार मे पैदा हुए।

कोलाबा जिला महाराष्ट्र मे है। ये उसी जिले के गगोडा गाव मे जन्मे। इनके पिता का नाम नरहरि राव था। ये बडौदा मे कपडा उद्योग मे तकनीकविद् थे।

कहा जाता है कि खाकी कपडे का चलन इन्होने ही आरम्भ किया था। तभी अग्रेजी सरकार ने इस खाकी कपडे को सिपाहियो की वर्दी के लिए मजूर कर दिया।

आचाय विनोबा भावे की माता का नाम रुक्मणी देवी था। ये धमपरायणा थी। ये मराठी थी। इसीलिए मराठी सन्तो के भजन गाती रहती। ये अपने पुत्र विनोबा को विनय कहती थी।

विनोबा जी की शुरू की शिक्षा गाव मे हुई। उसके बाद पढने के लिए वे अपने पिता के पास बडौदा आ गए। सन् 1913 ई० मे उन्होने हाई स्कूल की परीक्षा पास कर ली। इसके बाद इण्टरमीडियट मे पढने लगे।

बडौदा मे उनका नित्य का नियम था कि वे पुस्तकालय अवश्य जाते। वहा पर धर्म और इतिहास की पुस्तकें पढते। यही कारण था कि साहित्य मे उनकी गहरी रुचि हो गई।

स्कूल-कालेज की पढाई विनोबा जी को अच्छी नही लगती थी। उनके पास परीक्षा के जितने भी प्रमाण-पत्र थे, एक दिन वे सब जला दिए।

काशी मे आकर आचार्य विनोवा भाव ने सस्कृत पढना आरम्भ कर दिया। यह वह समय था जव पण्डित मदन मोहन मालवीय ने वनारस हिन्दू विश्वविद्यालय खोला था। उसका उद्घाटन होने वाला था। यह उद्घाटन महात्मा गाधी के द्वारा होना था। इसीलिए उन्हे आमन्त्रित किया गया था। विनोवा जी ने गाधी जी का भाषण सुना। वे वहुत अधिक प्रभावित हुए। वे गाधी जी के आश्रम म जो कोचरव में था पहुचे। यह वात सन् 1916 ई० की है। महीना जून का था, तारीख 6 थी।

सन् 1921 ई० मे विनोवा जी ने गाधी के सावरमती आश्रम से वरधा आश्रम का सचालन कार्य अपने हाथ मे ले लिया। वे सन् 1947 ई० तक यह कार्य करते रहे।

वरधा आश्रम मे विनोवा जी लगभग वारह साल रहे। फिर वे नलवाणी चले गए। यह हरिजनो का गाव था। नलवाणी मे वे सूत कातते। उसी से अपना गुजारा करते। सन् 1938 ई० मे वे वीमार पड गए।

तव महात्मा गाधी ने उन्हे परामर्श दिया कि वे स्वास्थ्य लाभ करने के लिए किसी पहाड पर चले जाए।

लेकिन विनोवा जी पहाड पर नही गए। वे पाच छह मील दूर पावनार नदी के किनारे आ गए। यही पर पोवनार नाम का गाव था। वही एक टीले पर उन्होने अपना डेरा डाला। वे उसी को पहाड कहते और आनन्दपूर्वक रहते। तीन महीने तक वे उस जगह पर रहे और पूरी तरह स्वस्थ हो गए।

इससे पहले सन् 1923 ई० मे नागपुर मे ध्वज सत्याग्रह चला था। उसमें वे गिरफ्तार हुए और एक साल के लिए जेल गए। यह उनकी पहली जेल-यात्रा थी।

विनोवा जी देश के नेता कहे जाने लगे। वे गाधी जी के वहुत प्रिय थे। सन् 1942 ई० मे जव भारत छोडो की महान क्रान्ति

हुई तो उन्हें भी अपने आश्रम से बन्दी बना लिया गया। उन्होंने तीन साल तक का कारावास भोगा। इसके बाद देश का विभाजन हो गया और भारत को आजादी मिल गई। तब विनोबा जी दिल्ली, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में पुनर्वास का काम करने लगे। इसी समय उन्होंने केरल, मध्यप्रदेश, आंध्र, तमिलनाडु और महाराष्ट्र का भी दौरा किया। फिर वे अपने आश्रम में लौट आए। यहा उन्होंने एक अभियान चलाया जिसे कंचन मुक्ति कहा जाता था। उनका कहना था कि हर आदमी को कंचन से मुक्त हो जाना चाहिए। जिसके पास ज्यादा सोना है वह गरीबों को दान कर दे। समाज में सबको एक समान और एक स्तर पर रहना चाहिए।

विनोबा जी ने भूदान अभियान चलाया। सबसे पहले उन्हे एक बहुत बड़े किसान ने अपनी सौ एकड़ जमीन दान में दे दी। विनोबा जी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने वह जमीन ऐसे किसानों को दी जिनके पास उनकी अपनी कोई जमीन नहीं थी और वे दूसरे के खेतों में काम करते थे।

आचार्य विनोबा भावे को हम दूसरा महात्मा गांधी भी कह सकते हैं। वे आध्यात्मिक विचारधारा के थे। साथ ही समाज-सुधारक भी थे और एक महान नेता थे। वे सन्त थे, व महात्मा थे और वे श्रद्धा के पात्र थे।

विनोबा जी बहुत ही शांत स्वभाव के थे। अपने मरने से कुछ साल पहले उन्होंने जैन धर्म स्वीकार कर लिया था। उन्होंने जैन ग्रन्थों का गहराई के साथ अध्ययन किया। दूसरे धर्मों के भी ग्रंथ पढ़े। तब एक उत्तम ग्रन्थ की रचना की, जिसका नाम समण सुत्तम है।

विनोबा जी की मृत्यु सन् 1982 ई० में हुई। चौदह नवम्बर को उनकी हालत बहुत खराब हो गई। उन्होंने पानी का भी

काशी मे आकर आचार्य विनोबा भावे ने संस्कृत पढना आरम्भ कर दिया। यह वह समय था जब पण्डित मदन मोहन मालवीय ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय खोला था। उसका उद्घाटन होने वाला था। यह उद्घाटन महात्मा गांधी के द्वारा होना था। इसीलिए उन्हे आमन्त्रित किया गया था। विनोबा जी ने गांधी जी का भाषण सुना। वे बहुत अधिक प्रभावित हुए। वे गांधी जी के आश्रम मे जो कोचरब मे था पहुचे। यह बात सन् 1916 ई० की है। महीना जून का था, तारीख 6 थी।

सन् 1921 ई० मे विनोबा जी ने गांधी के साबरमती आश्रम से वरधा आश्रम का सचालन कार्य अपने हाथ मे ले लिया। वे सन् 1947 ई० तक यह कार्य करते रहे।

वरधा आश्रम मे विनोबा जी लगभग बारह साल रहे। फिर वे नलवाणी चले गए। यह हरिजनो का गाव था। नलवाणी मे वे सूत कातते। उसी से अपना गुजारा करते। सन् 1938 ई० मे वे बीमार पड गए।

तब महात्मा गांधी ने उन्हे परामर्श दिया कि वे स्वास्थ्य लाभ करने के लिए किसी पहाड पर चले जाए।

लेकिन विनोबा जी पहाड पर नही गए। वे पाच छह मील दूर पोवनार नदी के किनारे आ गए। यही पर पोवनार नाम का गाव था। वही एक टीले पर उन्होने अपना डेरा डाला। वे उसी को पहाड कहते और आनन्दपूर्वक रहते। तीन महीने तक वे उस जगह पर रहे और पूरी तरह स्वस्थ हो गए।

इससे पहले सन् 1923 ई० मे नागपुर मे ध्वज सत्याग्रह चला था। उसमे वे गिरफ्तार हुए और एक साल के लिए जेल गए। यह उनकी पहली जेल-यात्रा थी।

विनोबा जी देश के नेता कहे जाने लगे। वे गांधी जी के बहुत प्रिय थे। सन् 1942 ई० मे जब भारत छोडो की महान क्रान्ति

हुई तो उन्हें भी अपने आश्रम से बन्दी बना लिया गया। उन्होंने तीन साल तक का कारावास भोगा। इसके बाद देश का विभाजन हो गया और भारत को आजादी मिल गई। तब विनोबा जी दिल्ली, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में पुनर्वास का काम करने लगे। इसी समय उन्होंने केरल, मध्यप्रदेश, आंध्र, तमिलनाडु और महाराष्ट्र का भी दौरा किया। फिर वे अपने आश्रम में लौट आए। यहां उन्होंने एक अभियान चलाया जिसे कंचन मुक्ति कहा जाता था। उनका कहना था कि हर आदमी को कंचन से मुक्त हो जाना चाहिए। जिसके पास ज्यादा सोना है वह गरीबों को दान कर दे। समाज में सबको एक समान और एक स्तर पर रहना चाहिए।

विनोबा जी ने भूदान अभियान चलाया। सबसे पहले उन्हें एक बहुत बड़े किसान ने अपनी सौ एकड़ जमीन दान में दे दी। विनोबा जी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने वह जमीन ऐसे किसानों को दी जिनके पास उनकी अपनी कोई जमीन नहीं थी और वे दूसरे के खेतों में काम करते थे।

आचार्य विनोबा भावे को हम दूसरा महात्मा गांधी भी कह सकते हैं। वे आध्यात्मिक विचारधारा के थे। साथ ही समाज-सुधारक भी थे और एक महान नेता थे। वे संत थे, व महात्मा थे और वे श्रद्धा के पात्र थे।

विनोबा जी बहुत ही शांत स्वभाव के थे। अपने मरने से कुछ साल पहले उन्होंने जैन धर्म स्वीकार कर लिया था। उन्होंने जैन ग्रन्थों का गहराई के साथ अध्ययन किया। दूसरे धर्मों के भी ग्रंथ पढ़े। तब एक उत्तम ग्रंथ की रचना की, जिसका नाम समण सुत्तम है।

विनोबा जी की मृत्यु सन् 1982 ई० में हुई। चौदह नवम्बर को उनकी हालत बहुत खराब हो गई। उन्होंने पानी का भी

त्याग कर दिया था। बहुत कहने पर भी पानी नही पिया।

जब विनोबा जी बहुत बीमार हुए तो उसके चार-पाच दिन पहले इन्दिरा गाधी आईं।

विनोबा जी ने कभी अपने को महान पुरुष नही माना। वे अपने को बहुत ही साधारण समझते थे।

15 नवम्बर को दीपावली का त्योहार था। घर घर मे दीपक जलाये जा रहे थे। तभी विनोबा जी का जीवन दीप बुझ गया।

उनकी मौत पर राष्ट्रीय शोक मनाया जाने वाला था, लेकिन आश्रम के लोगो ने इसके लिए मना कर दिया। उनका कहना था कि इससे विनोबा जी की स्वर्गीय आत्मा को दुख पहुचेगा।

विनोबा जी की मृत्यु के बाद सन् 1983 ई० मे उन्हे भारत-रत्न की उपाधि दी गई। यह गणतन्त्र दिवस का दिन था। 26 जनवरी। राष्ट्र का पवित्र त्योहार था।

आचार्य विनोबा भावे ने पूरे देश की पैदल यात्रा की। वे भूदान यज्ञ के लिए निकले थे। तेलगाना मे उन्हे दो महीने मे 12201 एकड जमीन मिली। उन्होने उस भूमि को भूमिहीनो मे वितरित कर दिया। इसके बाद अपने आश्रम आ गए। वहा लगभग तीन महीने तक रहे। फिर भूदान यज्ञ के लिए चल दिए और पद यात्रा करने लगे।

विनोबा जी बिहार गए। उन्हे जयप्रकाश नारायण का सहयोग मिला। उन्हे करीब तीन लाख लोगो ने जमीन दी। वह भी उन्होने बाट दी और उन्हें पूर्ण सतोष हो गया। लगभग सात साल तक वे पद यात्रा करते रहे। उनके पीछे जनता चलती। लोग उनका अनुकरण करते। उन्होने चालीस हजार मील की यात्रा की। उनकी यात्रा सुखद हो नही दुखद भी रही। उन्हें यात्रा

मे कष्ट तो बहुत कम भोगना पडा, लेकिन विरोधियो का सामना करना एक बहुत बडी समस्या बन गया। एक बार वे बैद्यनाथ धाम गए। यह बिहार मे है। उनके साथ हरिजन भी थे। जब हरिजन मन्दिर मे प्रवेश करने लगे तो पण्डे उन पर लाठिया लेकर टूट पडे। विनोबा जी के कान पर भी एक लाठी पडी। नतीजा यह निकला कि वे हमेशा-हमेशा के लिए बहरे हो गए।

विनोबा भावे ने अपने आश्रम का विद्या मन्दिर बना दिया। उसका सचालन महिलाए करने लगी। ये महिलाए ब्रह्मचारिणी थीं।

विनोबा जी का नारा जय जगत था। उनके मन मे विश्व बन्धुत्व की भावना थी। वे राजनीति से हमेशा अलग रहे। लेकिन समाज सुधार करते रहे। उन्होने डाकुओ के सुधार के लिए चम्बल घाटी का दौरा किया। उत्तर प्रदेश और राजस्थान का भी चक्कर लगाया। इसके लिए वे मध्यप्रदेश भी गये।

लगभग दो दर्जन डाकू सरदारो ने उनके सामने आत्म समर्पण कर दिया।

सन् 1960 ई० मे विनोबा जी ने एक अनोखा समारोह मनाया। यह 22 मई को भिण्ड मे आयोजित किया गया था। इसका नाम शस्त्र से विदाई था।

आचार्य विनोबा भावे एक आदर्श महापुरुष थे। कहना तो यह पडेगा कि वे एक देवदूत थे। धरती पर लोगो को ज्ञान देने आए थे। दीपक जला और बुझ गया। मगर वह अपना ऐसा प्रकाश छोड गया है जो हमारे मन के अधेरो को हमेशा दूर करता रहेगा।

डाक्टर विधानचन्द्र राय

डाक्टर विधानचन्द्र राय का जन्म विहार प्रदेश के वाकीपुर मे हुआ। यहा वाकीपुर पटना के पास ही है। वे सन् 1882 ई० मे पैदा हुए थे। एक जुलाई को जन्मे थे। इनके पिता का नाम प्रकाशचन्द्र राय था। वे आवकारी विभाग मे इस्पेक्टर थे। इनके तीन भाई और दो वहने थी। ये सबसे छोटे थे। इसीलिए सबके वहुत प्यारे थे। इनके वाल लम्बे थे। कभी-कभी हसी मे इनके पिता कह देते कि विधान के वाल लम्बे हैं। यह वडा होकर साधू वन जाएगा। लोग ऐसा सुनते तो हस देते।

विधानचन्द्र राय के पिता की वाणी सत्य हुई। वे साधू और सन्यासी तो नही बने, लेकिन आजीवन ब्रह्मचारी रहे। उन्होने ब्याह नही किया। उनसे वहुत कहा गया। वे एक योग्य डाक्टर थे। उन्होने जीवन भर समाज की सेवा की। मुख्य मत्री बन जाने के बाद भी वे अपनी डाक्टरी चलाते रहे।

वे पढने के लिए सबसे पहले गाव की पाठशाला मे वठाए गए। वहा उ हे वगला पढाई जाने लगी। वगला उनकी मातृ-भापा थी, क्योकि वे वगाली थे। फिर वे हाई स्कूल मे दाखिल हुए। जब वे चौदह साल के थे, तभी उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। विधानच द्र पढते ही रहे। वे काग्रेस म भी रुचि लेने लगे थे। सन् 1940 ई० तक वे काग्रेस मे नही आए। वे नगर निगम मे काय करते रहे और विश्वविद्यालय से भी सम्बन्धित रहे।

सन् 1939 ई० में डाक्टर राय को अखिल भारतीय चिकित्सा परिषद् का अध्यक्ष बना दिया गया।

सन् 1941 ई० मे डाक्टर विधानचन्द्र राय को कलकत्ता विश्वविद्यालय का उपकुलपति चुना गया। तब भारत और रगून पर जापान का आक्रमण हो रहा था। यह दूसरा विश्व महायुद्ध था। जो पूरे पैमाने पर चल रहा था। रगून से भाग कर लोग कलकत्ता आ गए और आ रहे थे। विधानचन्द्र राय ने उन शरणार्थियो को बसाने का उचित प्रबन्ध किया। वे उन्हें स्कूलो और कालेजो मे टिकाने लगे।

विश्वविद्यालय ने डाक्टर विधानचन्द्र राय को एक उपाधि से सम्मानित किया। यह उपाधि डाक्टर आफ साइंस की थी।

सन् 1961 ई० मे हमारी भारत सरकार ने उन्हे भारतरत्न की उपाधि दी।

भारत से डाक्टरो का जो दल विदेशो मे भेजा जाता, वह डाक्टर राय की देख रेख मे जाता।

सन् 1946 ई० मे देश मे साम्प्रदायिक झगडे हुए। डाक्टर राय ने घायलो का मन से इलाज किया। देश का विभाजन उन्हे भी खल रहा था। लेकिन किया क्या जाता ? अंग्रेजो से आजादी लेनी थी। इसीलिए यह स्वीकार करना पडा।

डाक्टर विधानचन्द्र राय चिकित्सा के क्षेत्र मे बहुत आगे थे। मगर वे राजनीति मे भी पीछे नही थे। उनको अपने देश से घना लगाव था।

डाक्टर साहब एक कुशल पत्रकार भी थे। सन् 1923 ई० मे उन्होंने सम्पादन का कार्य किया। कलकत्ता से चितरजन दास फारवर्ड निकालते थे। वे उसका सम्पादन करने लगे।

उन्होने दो पत्रिकाए और निकाली। एक का नाम वग वाणी था और दूसरी का नाम आत्मशक्ति।

इसके वाद डाक्टर साहव ने लिवर्टी नाम का एक अखवार निकाला।

डाक्टर राय ही ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होने पत्रकारिता का पाठ्यक्रम कलकत्ता विश्वविद्यालय मे शुरू किया।

हम डाक्टर राय को बगाल का निर्माता कहेगे। उन्होने विकास योजनाओ मे वहुत वडा भाग लिया। दुर्गापुर कोयला भट्टी योजना उन्ही की थी। गगा वाध परियोजना भी उन्होने वनाई थी।

डा॰ विधानचन्द्र राय ने जगलो का विकास भी किया है। 24 परगना क्षेत्र का पानी उन्होने निकलवाया। उन्होने समुद्र से मछली पकडने की योजना को भी अपने हाथ मे लिया।

जव डाक्टर विधानचन्द्र राय मुख्य मत्री थे तो उन्होने बहुत सी सडकें वनवाईं। कई पुलो का निर्माण करवाया।

डाक्टर राय को सगीत से वहुत प्रेम था। वे नृत्य और सगीत के कलाकारो को हमेशा प्रोत्साहित करते रहते थे। उनका कहना था कि कलाकार मनुष्य नही देवता होता है। वह कला के लिए पैदा होता है और कला के लिए ही मरता है।

डाक्टर विधानचन्द्र राय को फिल्मे देखने का भी वडा शौक था। वे मृत सम्राट उदय शकर के मित्र थे। जव भी कभी फिल्म देखने जाते, तो उनको साथ अवश्य ले लेते।

सन् 1915 ई॰ मे उन्होने एक मकान लिया था। यह विलिंगटन स्ट्रीट मे था।

यह मकान उन्होने एक अधिकारी से खरीदा था जो नौसेना का अफसर था। उनके पास कोई भी कुछ मागने जाता तो खाली हाथ नही लौटता।

डाक्टर विधानचन्द्र राय वहुत ही हसमुख थे। वे हमेशा प्रसन्न रहते। वे सभी नेताओ के प्रिय थे। कोई भी नही कह

सकता था कि विधानचन्द्र राय किसी के खिलाफ है और उसकी बुराई करते है।

सन् 1923 ई० मे महात्मा गाधी का अपेंडिक्स का आपरेशन हुआ था। तब वे पूना मे नजरबन्द थे और आगाखा के महल मे रह रहे थे।

यह वह समय था जब महात्मा गाधी का अनशन चल रहा था। उन्होने 21 दिनो का उपवास किया था। वे कमजोर थे। उनकी हालत दिन पर दिन बिगडने लगी। गोरी सरकार ने उनके इलाज के लिए तीन सरकारी डाक्टर रख दिए थे।

ये सरकारी डाक्टर सबसे पहले थे जनरल कैण्डो। दूसरे थे कर्नल भण्डारी और तीसरे थे कर्नल शॉ। ये तीनो डाक्टर गाधी जी की बराबर देखभाल कर रहे थे। अंग्रेजी सरकार को यह भय था कि अगर गाधी जी को कुछ हो गया। वे नजरबन्दी हालत मे मर गए तो भारत की जनता विद्रोह कर देगी। इसलिए उनकी जिन्दगी बहुत जरूरी है। नही तो हिन्दुस्तान अग्रजो के खिलाफ हो जाएगा।

इस तरह भारत सरकार ने महात्मा गाधी के लिए तीन डाक्टर नियुक्त कर दिए थे।

मगर गाधी जी ने अपने मन से तीन डाक्टर और बुलाए, जो सरकारी नही थे। अपनी प्राइवेट प्रेक्टिस करते थे। इनमे सबसे पहली थी डाक्टर सुशीला नयर और दूसरे थे। हमारे डाक्टर विधानचन्द्र राय। तीसरे डाक्टर गिल्डर थे। इन तीनो पर गाधी जी का अटूट विश्वास था। इसीलिए इन्हे बुलाया गया था।

गाधी जी की हालत बिगडती जा रही थी। वे खाने मे कुछ भी नही ले रहे थे। तब डाक्टर राय ने उन्हे समझाया और उनसे प्रार्थना की। उनका कहना था कि वे मीठे नीबू का रस ले लें।

थोडा सा रस पेट मे पहुच जाएगा तो कुछ शक्ति आ जाएगी। इससे उनका अनुशासन नही टूटेगा।

गाधी जी ने डाक्टर राय की प्रार्थना स्वीकार कर ली।

सन् 1925 ई० मे डाक्टर राय गाधी जी के सम्पक मे आए। गाधी उनसे मिलकर वहुत प्रस न हुए। उन्हे उनसे श्रद्धा हो गई।

सन् 1904 ई० मे वग वग के कारण जनता मे असतोप था। लोग अग्रेजो को वुरी निगाह से देखने लगे।

रवीन्द्रनाथ टैगोर से डाक्टर राय को प्रेरणा मिली। वे राष्ट्र के हित मे लग गए।

सन् 1906 ई० मे सर्जन वन गए। साथ ही एम० डी० की तैयारी कर रहे थे। उनकी प्रैक्टिस वहुत अच्छी चलने लगी थी। उन्हे मरीजो से फुरसत नही मिल पाती। जिसे देखो वही उनके पास भागा चला आता।

वे पढने के लिए इग्लड गए और वहा से डाक्टरी पास करके लौटे। जव भारत मे आए। तो उ हे सरकारी काम सौंप दिया गया। यह काम वहुत ही जटिल था। इसमे पुलिस कमचारियो का इलाज करना पडता।

उ हे प्राथमिक चिकित्सा के लिए रखा गया था।

डाक्टर विधानचन्द्र राय की लोकप्रियता दिन पर दिन वढ रही थी। वह मेडिकल कालेज मे पढाने भी लगे। वह वगाल कौंसिल के सदस्य भी वन गये। वे काग्रेस के एक नेता और वहुत अच्छे कायकर्ता थे।

डाक्टर राय ने पश्चिमी वगाल के लिए वहुत कुछ किया। कलकत्ता सीवेज गस योजना उनकी ही थी। दामोदर घाटी योजना को भी उन्होने पूरी लगन के साथ पूरा किया। सरोजिनी नायडू उनसे वहुत प्रसन्न थी। वह उनसे वडे प्यार स वोलती और उन पर गव करती थी।

डाक्टर विधानचन्द्र राय अपने जीवन-भर व्यस्त ही बने रहे। उन्होंने गहन अध्ययन किया और एक चोटी के डाक्टर बन गये। वह एक सर्जन थे और एक अच्छे फिजीशियन भी। वह वक्ता थे। उनके भाषण बहुत ही प्रभावशाली होते। वह श्रोताओं पर जादू डाल देते। उनकी वाणी बड़ी मधुर थी।

डाक्टर राय कभी घबड़ाते नहीं। कैसी भी कठिन से कठिन परिस्थिति हो, वह हमेशा मुस्कराते रहते। उनका कहना था कि कोई भी ऐसी समस्या नहीं है कि जिसका समाधान न हो।

अकेले काम करने में डाक्टर राय का मन खूब लगता। वह अपने मित्रों से कह देते कि सहारा आदमी की सबसे बड़ी कमजोरी है। जो अपने पैरों पर खड़ा है वही इंसान है और वही कुछ कर सकता है। जिन्दगी छोटी-सी है और काम बहुत है। इसलिए जल्दी करो, आगे बढ़ो। अगर तनिक भी देर हो गई तो फिर तुम्हारा काम अधूरा रह जाएगा।

डाक्टर विधानचन्द्र राय आज दूसरी दुनिया में हैं, जिसे स्वर्ग कहते हैं। उनके कार्य हमेशा याद किये जाएंगे और उनका नाम लिया जाएगा। वह पश्चिमी बंगाल के ही नहीं, पूरे भारत के निर्माता थे। उन्होंने देश के लिए उत्सर्ग कर दिया। सच्चे अर्थों में वे देश के लिए पैदा हुए थे और देश के लिए मरे। वह भारतरत्न थे और उन्हें भारत रत्न की उपाधि से अलंकृत भी किया गया।

वराह गिरि वेंकट गिरि

राष्ट्रपति वराह गिरि वेंकट गिरि का जन्म सन् 1894 ई० मे हुआ था। ये 10 अगस्त को जन्मे थे। इनका परिवार बहुत बडा था। इनसे बडे सात भाई थे और पाच बहनें। इनके पिता का नाम जोग्यापन्तुलू गारु था। ये एक अच्छे वकील थे और थोडे दिन विधान सभा के सदस्य भी रहे।

वराह गिरि पर अपने मामा का प्रभाव पडा जिससे उन्होने समाज-सेवा करना सीखा। उनका नाम हनवन्त राव था। अपने चाचा विश्वनाथ जी से वेकट गिरि ने लोगो की सेवा करने का सबक लिया।

गिरि ने सन् 1913 ई० मे सीनियर केम्ब्रिज की परीक्षा दी। उसमे वे उत्तीण हो गए। उनके पिता उ हे वकालत पढने के लिए इग्लड भेजना चाहते थे। लेकिन गिरि ने आयरलैंड का ठीक समझा और वे वही गए।

डबलिंग मे गिरि ने एक सगठन बनाया। यह दल भारतीय विद्यार्थियो का था।

इसी समय गिरि ने एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक का विषय अग्रेजी सरकार के खिलाफ था। गोरी सरकार ने दक्षिण अफ्रीका के काले निवासियो पर घोर अत्याचार किया था। उसकी हजारो पतिया वम्बई आईं। वह पकडी गईं। मामला हायरलैंड पहुचा। मगर कुछ भी नही हुआ। प्रेस वाले ने लेखक तथा प्रकाशक का गुप्त रखा। उसने किसी का भी नाम नही बतलाया।

डबलिन मे गिरि की भेंट महात्मा गाधी से हुई। गिरि बहुत प्रभावित हुए और वही से उन्हे देश-सेवा की लगन लग गई।

गिरि ने भारत आकर मद्रास हाई कोर्ट मे अपनी वकालत शुरू कर दी। उन्हे सरकारी नौकरी मिलती रही। लेकिन उन्होने साफ इकार कर दिया। उनका कहना था कि मैं अग्रेजो की गुलामी नही करूगा।

वेंकट गिरि आजादी की लडाई के मैदान मे आ गए। वह गाधी जी की सत्याग्रह मे भाग लेने लगे। सन् 1918 ई० मे यह काम आरम्भ कर दिया था। पूरे चार साल तक वे उसमे मनोयोग से लगे रहे।

सन् 1922 ई० मे वे काग्रेस महासमिति के सदस्य बन गए। उन्होने मद्यनिषेध आन्दोलन मे भी खूब खुलकर काम किया।

वेंकट गिरि ने बयरामपुर मे एक पुस्तकालय खोला था। उसमे लगभग दो ढाई हजार पुस्तके थी।

ये सब राष्ट्रीय नेताओ द्वारा लिखी गई थी।

वराह गिरि ने एक एसोसिएशन भी बनायी थी। यह यगमेन एसोसिएशन कहलाता। यह एसोसिएशन देश के लिए और गरीबो के लिए धन इकट्ठा करता था।

वराह गिरि वेंकट गिरि के पिता गोपाल कृष्ण गोखले के एक सच्चे भक्त थे। यही कारण था कि वेंकट गिरि को भी गोखले से श्रद्धा हो गई।

वराह गिरि वेकट गिरि जेल भी गए। वहा वे राजनैतिक बन्दी बनकर गए थे। इसीलिए अपने स्वाभिमान को जीवित रखा।

जब गिरि जेल से छूटे तो उन्होने ट्रेड यूनियन बनाई। इसमे भी उन्हे सफलता मिली। यह रेल कर्मचारियो के लिए बनायी गई थी।

वक्ट गिरि ने रेलवे विभाग में बहुत अधिक सुधार किया। वे कर्मचारियों के ही नहीं जनता के प्रिय और प्रिय होते चले गए।

फिर जब देश आजाद हो गया तो नेहरू जी ने अपना मन्त्रि-मण्डल बनाया। उसके लिए वराह गिरि वेंकट गिरि को आमन्त्रित किया। वह उन्हें श्रम मन्त्रालय दे रहे थे। उन्होंने इसे स्वीकार कर दिया।

सन् 1957 ई० में वराह गिरि वेंकट गिरि को राज्यपाल का पद मिला। वह उत्तर प्रदेश के राज्यपाल बन गए।

गिरि हमेशा मजदूरों की भलाई के लिए सोचते थे। वह उनका बहुत ध्यान रखते।

कुछ दिन बाद वेंकट गिरि को केरल का राज्यपाल बनाया गया। वह दो वर्ष तक वहां उस पद पर रहे। सन् 1967 ई० में वे उपराष्ट्रपति बना दिए गए।

इसके बाद राष्ट्रपति जाकिर हुसैन की मृत्यु हो गई तो वे कार्यवाहक राष्ट्रपति बन गए।

इसके बाद उसी सन् 1978 ई० में वे राष्ट्रपति हो गए। चौबीस अगस्त को वे हमारे चौथे राष्ट्र बने थे।

उनके इस चुनाव में कांग्रेस के दो टुकड़े हो गए। एक उनके खिलाफ था और दूसरा माफिक।

श्रीमती इन्दिरा गांधी के गिरि उम्मीदवार थे। वह भारी बहुमत से जीते।

सन् 1971 ई० में वराह गिरि वेंकट गिरि को भारतरत्न की उपाधि दी गई। वह मजदूरों के नेता थे। इसीलिए उन्हें यह सम्मान दिया गया।

वेंकट गिरि की मृत्यु सन् 1980 ई० में हुई। तब जून का महीना था और तारीख चौबीस थी।

वराह गिरि वेकट गिरि करोडो मजदूरो के नेता थे। वे सबके प्रतिनिधि थे। उनका कहना था कि मजदूरो के साथ हमेशा उचित न्याय होना चाहिए। जो पसीना वहाता है उसे भरपेट रोटी खाने का पूरा अधिकार है। उस पर जुम और अत्याचार नही होना चाहिए।

आज वेकट गिरि ससार मे नही हैं, लेकिन उनकी कीर्ति हमेशा अमर रहेगी। वे हमेशा प्रसन्न रहते और लोगो को भी हसा देते। यह उनकी आदत थी।

एक वार परिवार नियोजन पर बोलने के लिए मच पर आए तो सबसे पहले हसकर यह कहने लगे कि मैं परिवार नियोजन पर बोलने जा रहा हू। इससे पहले सबको यह वतला देना चाहता हू कि मैं सोलह बच्चो का पिता हू। उसमे से ग्यारह मर गए और पाच जीवित हैं। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि उनका स्वभाव विनोदी था। वे पहले लोगो को हसा देते और फिर उसके बाद अपनी बात समझाते। यही कारण था कि उनके भाषण का प्रभाव लोगो पर बहुत गहरा पडता।

वे एक योग्य और महान पुरुष थे। अपने जीवन मे उन्होने जितने भी काम किए वे सब देश हित के लिए थे। उनका कहना था कि जो कुछ भी करे, वह देश के लिए। मरो तो देश के लिए और जिन्दा रहो तो देश के लिए।

डा० राम विश्वेश्वरैया

विश्वेश्वरैया का जन्म कोलार जिले मे हुआ था। उनके गाव का नाम चिकवल्लापुर था। वे सितम्बर के महीने मे पन्द्रह तारीख को पैदा हुए थे। यह सन् 1861 ई० था।

कोलार कर्नाटक मे है। उनके पिता का नाम श्रीनिवास शास्त्री था। वे एक कुशल वैद्य थे। ज्योतिषी भी थे। वे छ भाई-बहन थे।

विश्वेश्वरैया की शुरू की पढाई चिकवल्लापुर मे हुई। उनके पिता का निधन हो गया और फिर वे अपने मामा के घर आ गए।

उनके मामा का नाम श्री रमैय्या था। वे मसूर मे नौकरी करते। जिससे विश्वेश्वरैया को पढने के लिए बगलौर भेज दिया। ये पढने मे वहुत तेज थे। इसीलिए ट्यूशन करते और उससे उन्हे अच्छी आमदनी हो जाती।

वहा की पढाई समाप्त करके विश्वेश्वरया पुन आ गए। वे कालेज ऑफ साइस मे पढने लगे। उनको छात्रवृत्ति भी मिलने लगी।

पुन मे ही उनकी भट प्रसिद्ध नेता समाजसवी देशभक्त गोविन्द राना डे से हुई।

सन् 1883 ई० मे वे इजीनियर बन गए। वे नासिक म नौकरी करने लगे। उन्होने सिचाई सफाई और जलपूर्ति का हमेशा ध्यान रखा।

कुछ दिन बाद उन्हे लदन भेज दिया गया।

इसके बाद कोल्हपुर मे वाटर वर्क्स का काम उन्हे दिया गया। शक्खर पर एक बाध उनकी देख-रेख मे बना।

उन्होने चौबीस साल तक सरकार की नौकरी की। अब उनका जी ऊब गया था और वे उससे छुटकारा पाना चाहते थे।

सन् 1908 ई० मे डाक्टर यम विश्वेश्वरैया ने अवकाश ले लिया। वे विदेशो का भ्रमण करने लगे। इसमे उनकी गहरी रुचि थी। वे पूरा यूरोप घूमे। अमेरिका भी पहुचे।

सन 1908 ई० मे हैदराबाद मे एक बहुत बडी बाढ आई थी। डाक्टर विश्वेश्वरया को बुलाया गया। उन्हे मुख्य इन्जीनियर का पद दिया गया। साथ ही उन्हे रेलवे का मत्री भी बना दिया गया। वे मसूर राज्य के रेल मत्री बन गए।

अब डाक्टर एम० विश्वेश्वरैया 48 साल के हो गए थे, लेकिन वे बिल्कुल जवान लगते। उनमे फुर्ती ही फुर्ती थी।

वे मैसूर राज्य के दीवान बने। लेकिन उन्हे तनिक भी गर्व नही था कि वे इतने ऊचे पद पर नियुक्त हैं।

डाक्टर यम विश्वेश्वरैया ने मैसूर राज्य मे बहुत सुधार किए। आज भी वहा उनका नाम श्रद्धा के साथ लिया जा रहा है। उन्होने मसूर मे एक बैंक भी खोला जिसका नाम बैंक ऑफ मैसूर है।

तभी भद्रावती मे लोहे और इस्पात का कारखाना खुला। उन्होने उसमे भी अपना पूरा-पूरा सहयोग दिया। उन्होने मैसूर राज्य म कई नयी रेलवे लाइनें बनवायी।

शिक्षा के मामले मे भी विश्वेश्वरैया बहुत आगे थे। यह उन्ही का प्रयास था कि मैसूर मे विश्वविद्यालय खुला जिसे मैसूर विश्वविद्यालय कहा जाता है।

सन् 1918 ई० मे वे मैसर मे दीवान के पद से अलग हो गए।

एक नहर थी, जिसे इरविन नहर कहा जाता था। अब उसका नाम विश्वेश्वरैया नहर है।

गाधी जी के बुलाने पर सन् 1939 ई०मे विश्वेश्वरैया उडीसा आए। यह अप्रैल का महीना था। तभी वहा महानदी पर एक बाध बनाया, जिसे हीरा कुड बाध कहते हैं।

डाक्टर यग विश्वेश्वरैया एक यम विश्व के लेखक भी थे। उन्होने एक पुस्तक लिखी है, जिसका नाम रिकन्स्ट्रक्टिग इडिया है।

सन् 1935 ई० मे विश्वेश्वरैया विदेश इसलिए गए थे कि भारत मे भी मोटर बनाने का कारखाना खोला जाए। यह उनका ही सहयोग था कि बम्बई मे मोटर बनाने का कारखाना खुला। इस कारखाने का नाम फोर्ड मोटर कारखाना था।

सन् 1955 ई० मे उन्हे भारतरत्न की उपाधि दी गई। तब वे 95 साल के थे। उनकी आखो की रोशनी कम हो गई थी, लेकिन स्वास्थ्य बहुत अच्छा था।

अब वे सौ साल के हो गए थे और उनकी जन्म शताब्दी मनायी गयी।

सन् 1962 ई० मे उनका देहान्त हो गया था। यह अप्रल का महीना था और चौदह तारीख थी। तब वे पूरे सौ साल और सात महीने के थे।

भारत हमेशा उनका ऋणी रहेगा। उन्होने देश के लिए बहुत कुछ किया है। वे देश के लिए पैदा हुए थे। अपना पूरे का पूरा जीवन देशहित मे ही लगा दिया।

□ □